(ISSN 2395 - 468X)

Year - 2015 Vol. 2, No. 5 Issue: May 2015

# Van Sangyan

*A monthly open access e-magazine*

**Tropical Forest Research Institute**

(Indian Council of Forestry Research and Education)

PO RFRC, Mandla Road, Jabalpur – 482021

# Van Sangyan

## Editoriral Board

**Patron:** Dr. U. Prakasham, IFS

**Vice Patron:** P. Subramanyam, IFS

**Chief Editor:** Dr. N. Roychoudhury

**Editor & Coordinator:** Dr. Naseer Mohammad

**Assistant Editor:** Dr. Rajesh Kumar Mishra

## Note to Authors:

We welcome the readers of Van Sangyan to write to us about their views and issues in forestry. Those who wish to share their knowledge and experiences can send them:

by e-mail to vansangyan_tfri@icfre.org

or, through post to The Editor, Van Sangyan,
Tropical Forest Research Institute,
PO-RFRC, Mandla Road,
Jabalpur (M.P.) - 482021.

The articles can be in English, Hindi, Marathi, Chhattisgarhi and Oriya, and should contain the writers name, designation and full postal address, including e-mail id and contact number.

TFRI, Jabalpur houses experts from all fields of forestry who would be happy to answer reader's queries on various scientific issues. Your queries may be sent to The Editor, and the expert's reply to the same will be published in the next issue of Van Sangyan.

# From the Editor's desk

*Tasar production in India dates back thousands of years, but oak tasar culture is of recent origin in India. The oak tasar silkworm is a fertile interspecific cross of the Chinese oak tasar silkworm (Antheraea pernyi) with its Indian sister species Antheraea roylei. It is estimated that about 2.5 million ha of forest land in the sub-Himalayan belt of India is covered by various Quercus species, and hardly a few thousand ha have so far been exploited commercially. Agroforestry is a dynamic, ecologically based, natural resources management system that, through the integration of trees on farms and in the agricultural landscape, diversifies and sustains production for increased social, economic and environmental benefits for land users at all levels. By nurturing trees on their farms, pastures and homesteads farmers have been managing agroforestry systems for millennia. Most smallholder farmer agroforestry systems are diverse, multi-species and integrate trees with annual crops and/or animals. Traditionally, these systems are extensive in nature, with small quantities of many products produced for household consumption.*

*This issue of Van Sangyan contains an article on temperate tasar culture and agro forestry for sustainable crop production. There are also useful articles on carbon sequestration in agroforestry systems, important medicinal plants of Telangana State, control measures of white grub, importance of honey bee, Kash plateau of Western Ghats, ethno medicinal uses of tree species by tribal communities in Madhya Pradesh and biodiversity of Alcedo atthis and Thalictrum foliolosum.*

*I hope that you would find all information in this issue relevant and valuable.*

*Readers of Van Sangyan are welcome to write to us about their views and queries on various issues in the field of forestry.*

*Looking forward to meet you all through forthcoming issues.*

**Dr. N. Roychoudhary**

Scientist G & Chief Editor

# Contents Page


1. कीड़ों से रोजगार: पर्यावरण मित्र रेशम कीट पालन एवं उत्पादन 1

   भाग चार: ओक टसर या टेम्परेट टसर (शीतोष्ण रेशम) - डॉ. राजेश कुमार मिश्रा, डॉ. नसीर मोहम्मद, एवं डॉ. एन. रॉयचौधरी

2. Agro forestry: an economically viable option for sustainable crop production - Dr. Nanita Berry 12

3. Estimation of carbon sequestration in agroforestry systems - Vikas Kumar 17

4. Two important medicinal plants of Telangana State, India. - Dr. P. Shivakumar Singh 23

5. lQn xhMkj ;k 0gkbV xc ,o fu;=.k mik; - MkW ih0 ch0 eJke 27

6. मधमाशी : परागसिंचनाद्वारे पीक उत्पादन वाढवणारे प्रभावी कीटक - शालिनी भोवते 30

7. पश्चिमी घाट का कास पठार (Kas Plateau) . डॉ. संजय पौनीकर एंवम डॉ. नितिन कुलकर्णी 35

8. Ethno medicinal uses of tree species prevalent among tribal communities in Madhya Pradesh – Dr. Rajiv Rai 39

9. Know your biodiversity - Swaran Lata and Dr. P.B. Meshram 50

# कीड़ों से रोजगार: पर्यावरण मित्र रेशम कीट पालन एवं उत्पादन

## भाग चार: ओक टसर या टेम्परेट टसर (शीतोष्ण रेशम)

डॉ. राजेश कुमार मिश्रा, डॉ. नसीर मोहम्मद एवं डॉ. एन. रॉयचौधरी

उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर

मनुष्य रेशम उत्पादों के प्रति हमेशा जिज्ञासु रहा है । वस्त्रों की रानी के नाम से विख्यात रेशम विलासिता, मनोहरता, विशिष्टता एवं आराम का सूचक है । मानव जाति ने अद्वितीय आभा वाले इस झिलमिलाते वस्त्र को चीनी सम्राज्ञी शीलिंग टी द्वारा अपने चाय के प्याले में इसके पता लगने के काल से ही चाहा है यद्यपि इसे अन्य प्राकृतिक एवं बनावटी वस्त्रों की कई गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ा, फिर भी शताब्दियों से वस्त्रों की रानी के रूप में विख्यात, इसने निर्विवाद रूप से अपना स्थान बनाए रखा है । प्राकृतिक आभा, रंगाई एवं जीवन्त रंगों के प्रति अंतर्निहित आकर्षण, उच्च अवशोषण क्षमता, हल्का, लचकदार एवं उत्कृष्ट वस्त्र-विन्यास जैसे श्रेष्ठ गुणों ने रेशम को

**ओक वृक्ष की पत्ती**

विश्व में किसी सुअवसर का अत्यंत सम्मोहक एवं अपरिहार्य साथी बना दिया है ।

रेशम, रसायन की भाषा में रेशमकीट के रूप में

**ओक वृक्ष**

विख्यात इल्ली द्वारा निकाले जाने वाले एक प्रोटीन से बना होता है । ये रेशमकीट कुछ विशेष खाद्य पौधों पर पलते हैं तथा अपने जीवन को बनाए रखने के लिए 'सुरक्षा कवच' के रूप में कोसों का निर्माण करते हैं । रेशमकीट का जीवन-चक्र 4 चरणों का होता है, अण्डा, इल्ली, प्यूपा तथा शलभ । व्यक्ति

रेशम प्राप्त करने के लिए इसके जीवन-चक्र में कोसों के चरण पर अवरोध डालता है जिससे व्यावसायिक महत्व का अटूट तन्तु निकाला

जाता है तथा इसका इस्तेमाल वस्त्र की बुनाई में किया जाता है।

रेशम ऊंचे दाम किंतु कम मात्रा का एक उत्पाद है जो विश्व के कुल वस्त्र उत्पादन का मात्र 0.2% है। चूंकि रेशम उत्पादन एक श्रम आधारित उच्च आय देने वाला उद्योग है तथा

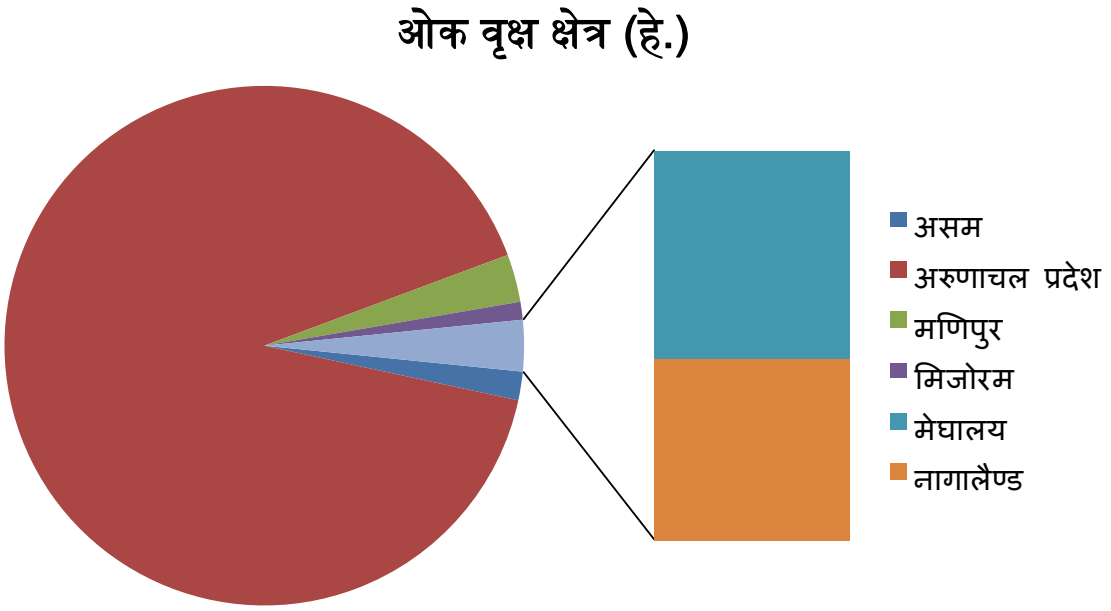


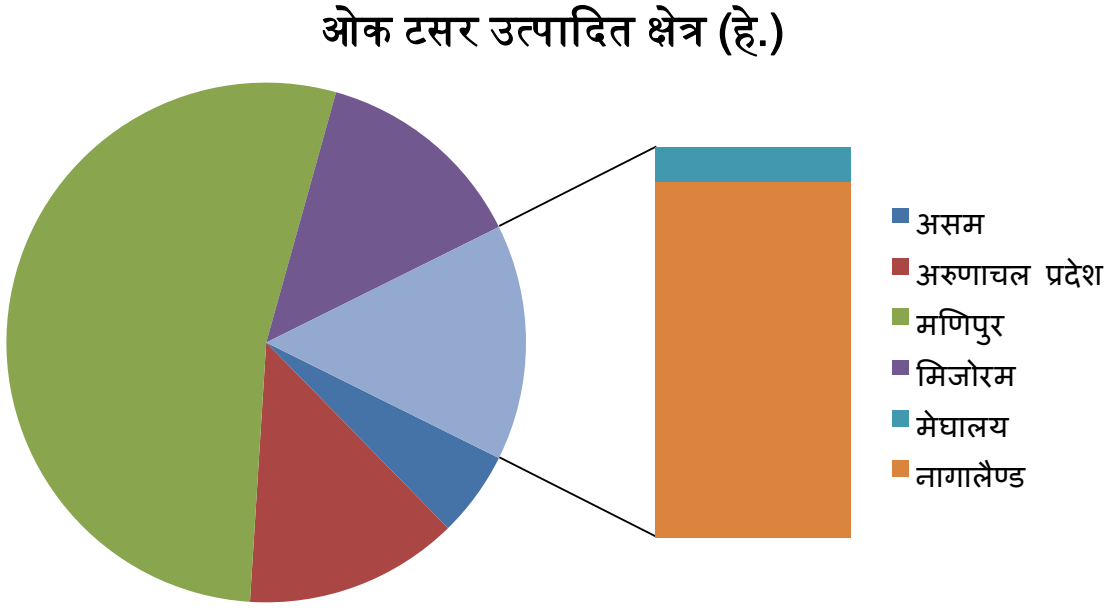

इसके उत्पाद के अधिक मूल्य मिलते हैं, अत: इसे देश के आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण साधन समझा जाता है। विकासशील देशों में

रोजगार सृजन हेतु खासतौर से ग्रामीण क्षेत्र में तथा विदेशी मुद्रा कमाने हेतु लोग इस उद्योग पर विश्वास करते हैं। तसर रेशम कीट बाहरी क्षेत्रों में पाला जाने वाला एक पॉलीफेगस polyphagous कीट है। यह मध्य भारत के उष्णकटिबंधीय क्षेत्र के महत्वपूर्ण खाद्य पौधों साल, अर्जुन और आसन (टर्मीनालिया टोमेनटोसा) पर पाले जाते हैं। इन के अलावा रेशम के कीड़ों को समशीतोष्ण प्रजातियों जैसे बेर, जामुन आदि पर भी ओक रेशमकीट की (Quercus serrata) की विभिन्न प्रजातियों को पाला जाता है।

**ओक वृक्ष वन**

उष्णकटिबंधीय तसर रेशम के कीड़े ज्यादा मजबूत होते है। उष्णकटिबंधीय तसर का झारखंड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और बिहार में और महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल और आंध्र प्रदेश में एक छोटे पैमाने पर उत्पादन किया जाता है। ओक तसर की मणिपुर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, असम, मेघालय और जम्मू-कश्मीर आदि राज्यों के उप हिमालयी क्षेत्र में खेती की जाती है।

तसर रेशम मूल रूप से एक वन उपज है और यहां तक कि पूर्व भारत में शहतूत रेशम की शुरुआत करने के लिए उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अति प्राचीन काल से आदिवासियों द्वारा इसके उत्पादन का प्रयास किया गया था। तसर रेशम का 30% मनुष्य द्वारा प्राकृतिक रूप से केवल जंगली से प्राप्त किया जा रहा है। उष्णकटिबंधीय भारत में पर्यावरण के अनुकूल "डाबा" की बड़े पैमाने पर खेती की जाती है।

विश्व में भौगोलिक दृष्टि से एशिया में रेशम का सर्वाधिक उत्पादन होता है जो विश्व के कुल उत्पाद का 95% है। यद्यपि विश्व के रेशम मानचित्र में 40 देश आते हैं, किंतु अधिक मात्रा में उत्पादन चीन एवं भारत में होता है तथा इसके उपरांत जापान, ब्राजील एवं कोरिया में। चीन, विश्व को इसकी आपूर्ति करने में अग्रणी रहा है। रेशम के सर्वाधिक उत्पादन में भारत द्वितीय स्थान पर है, साथ ही विश्व में भारत रेशम का सबसे बड़ा उपभोक्ता भी है। यहां घरेलू रेशम बाजार की अपनी सशक्त परम्परा एवं संस्कृति है। भारत में शहतूत रेशम का उत्पादन मुख्यतया

कर्नाटक, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, जम्मू व कश्मीर तथा पश्चिम बंगाल में किया जाता है जबकि गैर-शहतूत रेशम का उत्पादन झारखण्ड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा तथा उत्तर-पूर्वी राज्यों में होता है।

**ओक रेशम इल्लियाँ**

व्यावसायिक महत्व की कुल 5 रेशम किस्में होती हैं जो रेशमकीट की विभिन्न प्रजातियों से प्राप्त होती हैं तथा जो विभिन्न खाद्य पौधों पर पलते हैं। ये किस्में हैं : शहतूत, ओक तसर एवं उष्णकटिबंधीय तसर, मूगा एवं एरी।

सिल्क भारतीयों के जीवन और संस्कृति के साथ घुल मिल गया है। भारत का रेशम उत्पादन में एक समृद्ध और जटिल इतिहास रहा है और उसके रेशम व्यापार 15 वीं सदी की है। रेशम उत्पादन उद्योग भारत में ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में लगभग 7,850,000 लोगों को रोजगार प्रदान करता है। इनमें से श्रमिकों की

**पूर्ण् विकसित ओक रेशम इल्ली एवं कोकून**

एक बड़ी संख्या में आदिवासी, महिलाओं सहित समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के हैं। भारत के पारंपरिक और संस्कृति बाध्य घरेलू बाजार और एक भौगोलिक विशिष्टता को प्रतिबिंबित कि रेशमी वस्त्र की अद्भुत विविधता, रेशम उद्योग में एक अग्रणी स्थिति

हासिल करने के लिए देश की मदद की है । भारत को शहतूत, उष्णकटिबंधीय तसर, ओक तसर सहित सभी पांच ज्ञात व्यावसायिक रेशम उत्पादन करने वाला देश होने का अद्वितीय गौरव प्राप्त है ।

तसर, इरी और मूगा में सुनहरा पीला चमक के साथ मूगा अद्वितीय है और इस पर भारत का विशेषाधिकार है । भारत दुनिया में रेशम का सबसे बड़ा उत्पादक बना हुआ है । 2012-13 में में उत्पादित रेशम की चार किस्मों के अलावा, शहतूत 79% (18,715 टन), तसर 7.3% (1729 मीट्रिक टन), इरी 13.2% (3116 मीट्रिक टन) और कुल की मूगा 0.5% (119 लाख टन) कच्चा रेशम का उत्पादन हुआ है । 2013-14 में कच्चे रेशम उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है ।

हमारे देश के उत्तर पूर्वी क्षेत्र के सात राज्यों, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड तथा त्रिपुरा उनकी प्राकृतिक सीमाओं, वहाँ निवास करने वाले लोगों की अधिकांश रूप से सांस्कृतिक एवं सामाजिक संरचना की अत्यधिक समानता के कारण ये सात बहनों के नाम से प्रसिद्ध हैं । उत्तर पूर्वी क्षेत्र 21°57' से 29° 28' उत्तरी अक्षांश तथा 89°40' से 97° 25' पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है । यह क्षेत्र उपहिमालयन पहाड़ी भू-भाग एवं प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले अथाह जीव जन्तुओं एवं वनस्पतियों का प्राकृतिक रूप से नैसर्गिक घर है ।

*एन्थीरिया पेर्निल (Antheraea pernyl)*

इस क्षेत्र का भौगोलिक क्षेत्रफल लगभ दो लाख पचास हजार वर्ग किलोमीटर है जो कि हमारे देश के सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्रफल का आठ प्रतिशत है । इस क्षेत्र की सांस्थितिक (physiological) के साथ स्थलाकृतिक (topographical) संरचना मे पर्याप्त अंतर होने केए कारण इस क्षेत्र में व्यापक जलवायु परिवर्तन पाया जाता है । इस क्षेत्र का लगभग साठ प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र पहाड़ियों से आच्छादित है । उच्च अवक्षेपण (precipitation) के साथ पहाड़ी भू-भाग इस क्षेत्र को विभिन्न प्रकार के वनों, जीव जन्तुओं एवं वनस्पतियों का इसे नैसर्गिक घर बनाता है । इस क्षेत्र का लगभग 16, 500 हजार हेक्टेयर

भू-भाग वर्ष 1997-98 के दौरान वनों से आच्छादित था जो कि हमारे देश की लगभग एक चौथाई वन संसाधनों के बराबर है ।

वर्तमान समय में झाड़ियों, खरपतवार बढ़ती हुई बंजर भूमि पर अल्प मात्रा में होने वाले पेड़ पौधों ने इस क्षेत्र की प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले जंगलों का स्थान ले लिया है। नष्ट

*एन्थीरिया प्रॉयली* (*Antheraea proylei*)

होती हुई जैव सांख्यिकी (biomass) ने न केवल इस क्षेत्र के ग्रामीण परिवेश की सामाजिक अर्थव्यवस्था के ताने बाने को ध्वस्त किया है अपितु इस क्षेत्र की पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकी को भी बहुत नुकसान पहुँचाया है। कृषि आधारित उद्योग तथा वानिक़ी एक दूसरे के ऊपर काफी हद तक निर्भर है । देश के उत्तर पूर्वी क्षेत्रों के कृषि आधारित उद्योग की ऊन्नति में ओक टसर निर्मित करने वाले कीट ए. प्रोलिएट ने एक नया अध्याय लिखा है खासकर उत्तर पूर्व तथा उत्तर पश्चिम केए राज्य में। ओक रेशम उद्योग ने इस क्षेत्र के आर्थिक रूप से पिछड़े, आदिवासियों एवं किसानों की आर्थिक उन्नति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

उत्तर पूर्वी क्षेत्र के एक वृहद भू-भाग के वन क्षेत्र का क्षरण हुआ है जिसमें पिछले लगभग 8 वर्षों में असम में 11 प्रतिशत, मेघालय में 68 प्रतिशत हुआ है। उत्तर पूर्वी क्षेत्र में लगभग 1500 हजार हेक्टेयर प्रति वर्ष की दर से वनों का ह्रास हुआ है। एक अध्ययन के अनुसार वर्ष 1981 से 1998 के दौरान लगभग 175 हजार हेक्टेयर वन क्षेत्र का ह्रास हुआ है । सबसे अधिक वनों की क्षति असम में (92 हजार हेक्टेयर) तथा सबसे कम क्षति मिजोरम में (7 हजार हेक्टेयर) हुई है । इमारती एवं जलाऊ लकड़ी की बढ़ती हुई मांग ने इस क्षेत्र के वनों को संकट में डाल दिया है क्योंकि पहाड़ी वन क्षेत्रों में चारे, ईंधन एवं लकड़ी हेतु पूर्ण रूप से लोग वनों पर ही निर्भर हैं। एक अधय्यन के

*एन्थीरिया फ्रिथी Antheraea frithi*

अनुसार देश की कुल लकडी की आवश्यकता का लगभग 10 प्रतिशत उत्तर पूर्वी वन क्षेत्रों से ही प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त औद्योगिक लकड़ी की आवश्यकता वर्ष 1970 में लगभग 12 मिलियन मी.$^3$ थी जो कि वर्ष 1985 में बढ़कर लगभग 50 मिलियन मी.$^3$ हो गई जो कि इस क्षेत्र के वन क्षेत्रों के ह्रास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

हमारे देश में कीट एन्थीरिया प्रॉयली (*Antheraea proylei*) की खोज होने के पूर्व इस हिमलाय के इस क्षेत्र में ओक टसर उत्पादन न शुरु हुआ था न ही इसकी कोई संभावना थी । ए. प्रोलिएट कीट इस क्षेत्र में ओक टसर के उत्पादन के क्षेत्र में मील का पत्थर साबित हुआ है । उत्तर पूर्वी क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले ओक वृक्षों में सबसे अधिक वन क्षेत्र नागालैण्ड ( 15 से 20 हजार हेक्टेयर), अरुणाचल प्रदेश (12 लाख हेक्टेयर), मणिपुर (40 हजार हेक्टेयर), असम (24 हजार हेक्टेयर), मेघालय (23 हजार हेक्टेयर) तथा मिजोरम (15 हजार हेक्टेयर) के अंतर्गत आता

*एन्थीरिया पॉलीफेमस Antheraea_polyphemus*

है । इन क्षेत्रों में से ओक टसर उत्पादन हेतू असम में लगभग दो हजार हेक्टेयर, अरुणाचल प्रदेश में लगभग पाँच हजार हेक्टेयर, मणिपुर में लगभग बीस हजार हेक्टेयर, मिजोरम में लगभग पाँच हजार हेक्टेयर, मेघालय में लगभग पाँच सौ हेक्टेयर तथा नागालैण्ड में लगभग पाँच हजार हेक्टेयर वन क्षेत्र का दोहन किया जा रहा है ।

*एन्थीरिया पेर्निल कोकून*

ओक टसर का उत्पादन यदि व्यापारिक स्तर पर किया जाता है तो इससे न केवल इस क्षेत्र के वनों में तीव्र गति से हो रही क्षति पर रोक लग सकती है वरन इस क्षेत्र के लोगों की आजिविका में वृद्धि के साथ साथ इस क्षेत्र में होने वाली स्थानांतरित खेती पर भी रोक लगेगी जो कि इस क्षेत्र के वनों के ह्रास का एक महत्वपूर्ण कारण है क्योकि ओक वृक्षों पर रेशम उत्पादन करने से लोग इन वृक्षों को नुकसान नहीं पहुँचायेंगे अपितु उनकी सुरक्षा भी करेंगें । वन्य रेशम या ओक रेशम के अंतर्गत होने वाली विभिन्न गतिविधियों जैसे रेशम कीट पालन, धागाकरण, बुनाई एवं इसके सह उत्पादों के द्वारा लोग अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं । ओक वृक्षों पर रेशम उत्पादन का सदसे अधिक लाभ इन वृक्षों की सघन गुल्म वन क्षमता (coppicing capacity) है । ओक टसर के

उत्पादन हेतू कीटों के पालन हेतू ए. प्रोयली (*A. proyeli*), ए. फ्रिथि (*A. frithii*), ए. रोयली (*A. roylei*) वृक्ष प्रजाति को प्राथमिकता दी जाती है । ऐन्थेरिया प्रजाति (*Antheraea*) आर्थिक दृष्टि से ओक रेशम उत्पादन हेतु अति महत्वपूर्ण मानी जाती है क्योंकि इस वृक्ष पर उत्पादित होने वाला रेशम आर्थिक दृष्टि से अत्यंत उच्च कोटि का होता है एवं नियमित आय का साधन हओने के साथ साथ उत्तर पूर्वी क्षेत्र के पारिस्थितिकी के संतुलन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । अब तक ओक वृक्षों की लगभग पन्द्रह प्रजातियां चिन्हित की गई हैं जिन पर ओक

*एन्थीरिया पॉलीफेमस कोकून*

रेशम के कीटों को पाला जाता है । इन प्रजातियों में से ए. यमामाइ (*A. yamamai*) प्रजाति के वृक्षों पर ओक रेशम के कीटों का पालन पोषण जापान में, ए. पेर्निल (*A. pernyi*) प्रजाति के वृक्षों पर ओक रेशम के कीटों का पालन पोषण चीन में तथा ए.

पॉलिफेमस (*A. polyphamus*) प्रजाति के वृक्षों पर ओक रेशम के कीटों का पालन पोषण अमेरिका में किया जाता है । ओक वृक्षों की शेष प्रजातियाँ भारत में पायी जाती हैं जिन पर ओक रेशम के कीटों का पालन पोषण किया जाता है ।

**ओक टसर उत्पादन से अनुमानित औसत आय**

| | |
|---|---|
| औसत कोकून उत्पादन 1000 डीएफ़एल/हे. | 25000 कोकून |
| औसत कोकून बीज/हे. | 15000 |
| औसत निम्न कोटि कोकून/हे. | 10000 |
| कोकून बीज का मूल्य | 0.50 रु. प्रति कोकून |
| 15000 कोकून बीज से आय | रु. 7500 |
| निम्न कोटि कोकून से आय रु. 15/किलो. | र. 240 |
| कोकून बिक्री से कुल आय | रु. 7740 |

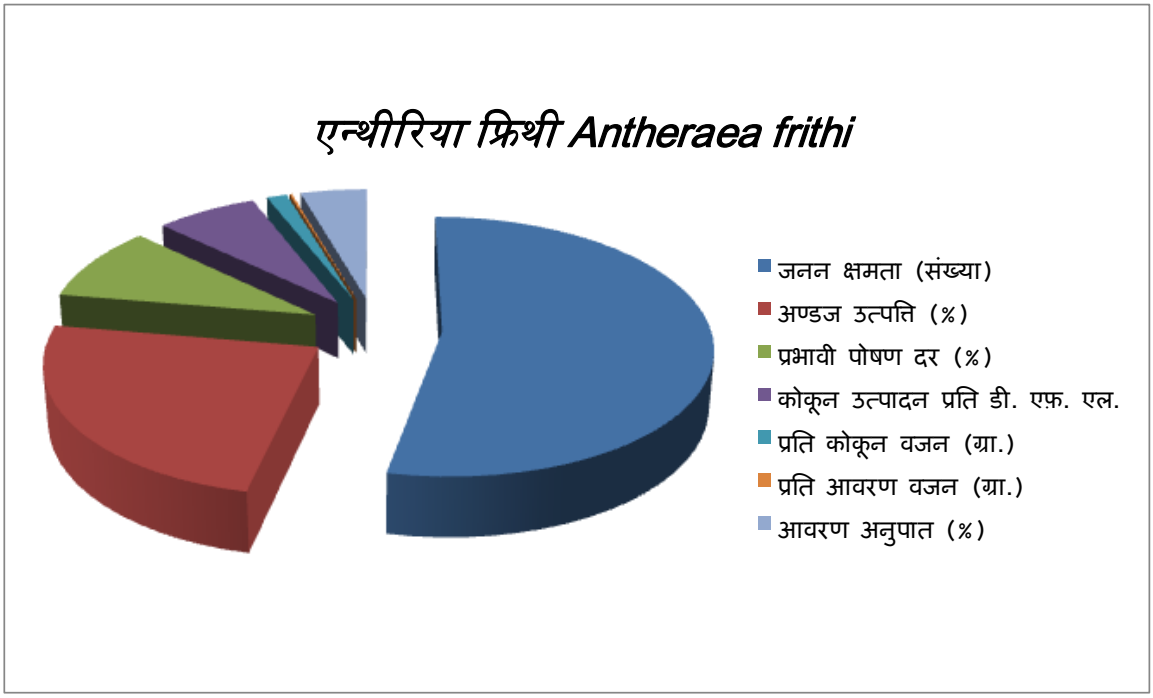


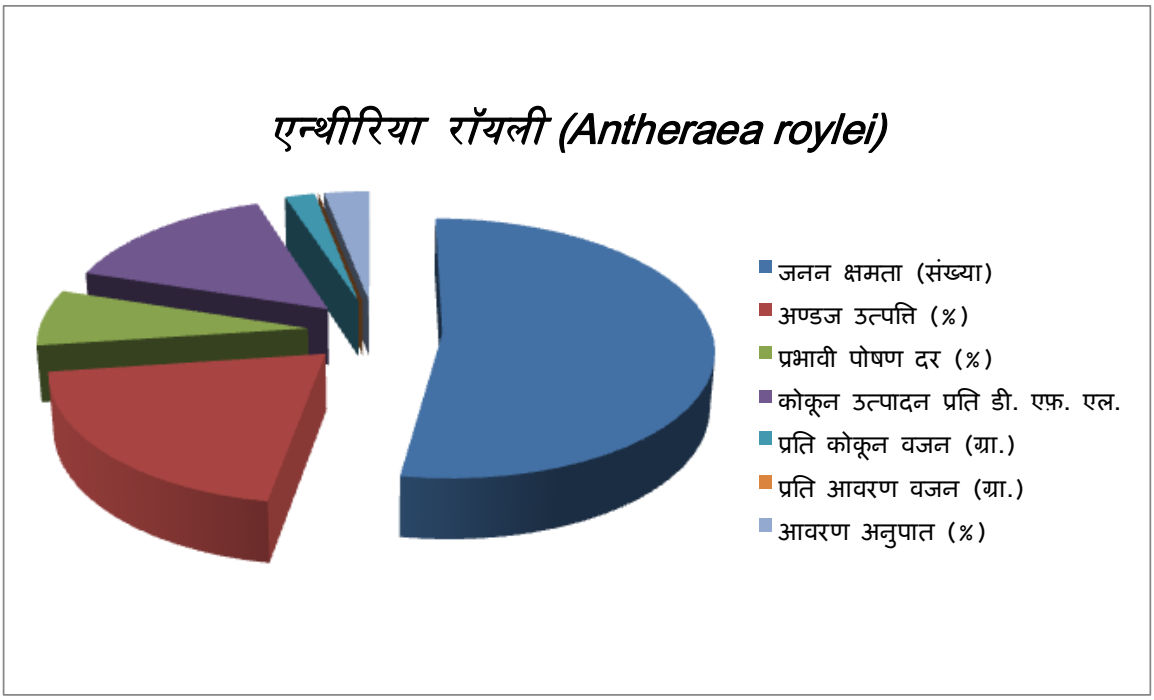


ओक टसर रेशम की बसन्त की फसल का मार्च-अप्रैल के दौरान किया जाने वाला पालन पोषण नियमित रूप से पूर्ण सफल रहता है तथा इसे दोनों, बीज एवं वाणिज्यिक फसल के रुप में किइया जा सकता है । शरद फसल जिसका की माह सितम्बर – अक्टूबर माह के दौरान पालन पोषण किया जाता है को बीज

फसल के रूप में अपनाया जाता है क्योंकि इस मौसम में बीज कटाई हेतु अतिउत्तम होती है।

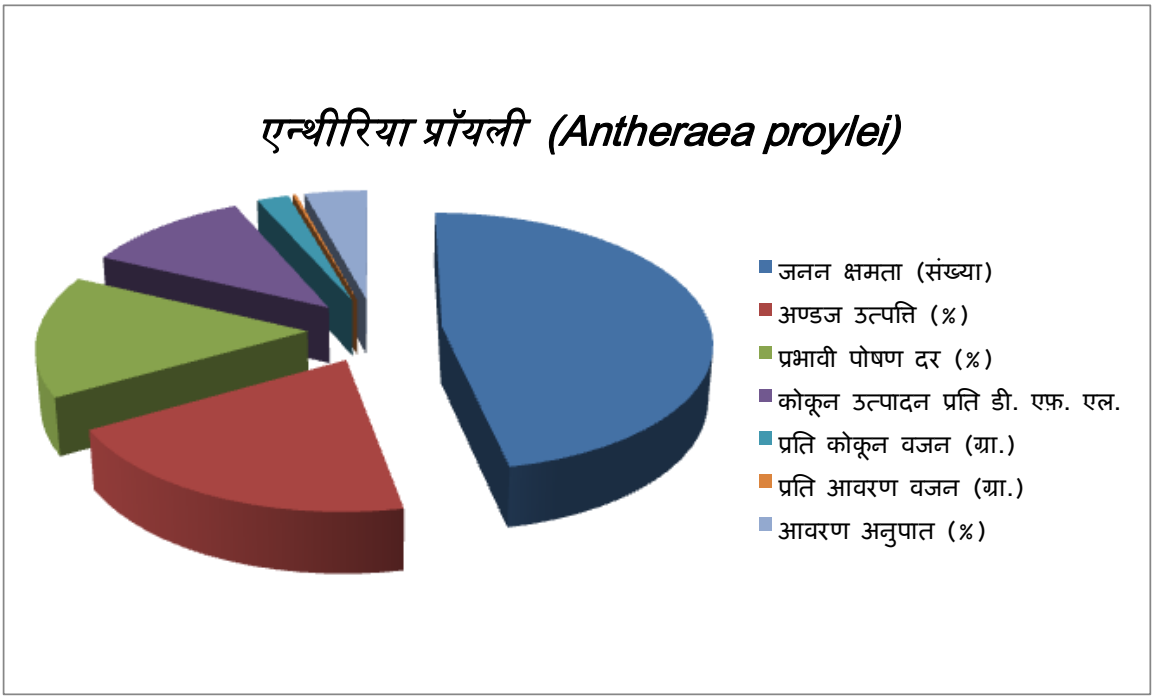


**ओक टसर रेशम कीट की कुछच प्रमुख प्रजातियाँ, उनका मूल स्थान एवं उनके प्राथमिक खाद्य पौधे**

| सामान्य नाम | वैज्ञानिक नाम | मूल स्थान | प्राथमिक खाद्य पौध |
|---|---|---|---|
| ओक तसर रेशमकीट | एन्थीरिया प्रॉयली | भारत | क्युरकस इनकाना<br>क्यू. सेराट्टा<br>क्यू. हिमालयना<br>क्यू. ल्यूको ट्राइकोफोरा<br>क्यू. सेमीकार्पिफोलिया<br>क्यू. ग्रिफ्ती |
| ओक तसर रेशमकीट | एन्थीरिया फ्रिथी | भारत | क्यू. डीलाडाटा |
| ओक तसर रेशमकीट | एन्थीरिया कॉम्प्टा | भारत | क्यू. डीलडाटा |
| ओक तसर रेशमकीट | एन्थीरिया पेर्निल | चीन | क्यू. डेनडाटा |
| ओक तसर रेशमकीट | एन्थीरिया यमामाई | जापान | क्यू. एकयूटिसिमा |

ओक तसर उत्पादन से होने वाली आय, स्थानांतरित खेती से होनेवाली आय की तुलना में कहीं अधिक होती है । धान की खेती करनेवाले उत्पादक मुश्किल से लगभग 80 क्विंटल धान का उत्पादन कर पाते हैं जिससे उन्हें 500 रुपये प्रति क्विंटल की दर से कुला 4000 रुपये की आय प्राप्त होती है । इस प्रकार की फसल पारिवारिक मजदूर हेतु अनुपयोगी है जब तक की फसल तैयार नहीं हो जाती है । दूसरी ओर ओक रेशम के कोड़ों के पालन पोषण हेतु लगभग एक हेक्टेयर ओक वृक्षारोपण से उत्पादक कोकून बेचकर ही लगभग 7500 रुपये अर्जित कर सकता है । यदि उसके परिवार उत्पादित कोकून की फसल से कताई एवं धागाकरण का कार्य भी किया जाता है तो परिवार लगभग 11000 रुपये अर्जित कर सकता है ।

ओक रेशम कीट पालन की फसल लगभग 60 दिनों में तैयार हो जाती जबकि स्थानांतरित खेती द्वारा की जानेवाली लगभग 150 दिनों में तैयार होती है । एक ही वर्ष में दो फसल तैयार कर उत्पादक अपनी आय दोगुनी कर सकता है जो कि स्थानांतरित खेती से अधिक लाभदायक है । स्थानांतरित खेती करने हेतु वन वृक्षों को काटा जाता है जबकि ओक रेशम कीट पालन हेतु ओक वृक्षों का संरक्षण किया जाता है जो कि हिमालय क्षेत्र की पारिस्थिति की रक्षा करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है । हिमालय क्षेत्र में ओक वृक्षों को काटकर, सेवदार के वृक्षों के वृक्षारोपण के परिणामस्वरुप इस क्षेत्र में कई खतरनाक भूस्खलन हुए है । उत्तर पूर्वी खेत्र में पाये जाने वाले ओक वृक्षों का संरक्षण एवं इन पर ओक टसर कीट पालन न केवल एक नियमित आय का स्रोत बनेगा अपितु इस क्षेत्र के तीव्र गति से हो रहे वनों के ह्रास को भी रोकेगा तथा इस क्षेत्र की पारिस्थितिकी को बचाने में भी सक्षम होगा ।

# Agro forestry: an economically viable option for sustainable crop production

**Nanita Berry**
Agro forestry Division, Tropical Forest Research Institute, Jabalpur (M.P.)

Agro forestry word denotes with two words Agro and forestry or it is a combinations of land use system by cultivating agriculture crop with tree crop either simultaneous or in rotation in the same piece of land. The practice of agro forestry was carried out by the farmers since ancient period but it was scientifically intervened from 1979. Now a days ,when climate has no definite periodicity of rain, nor for cooler winter or hot summer days, the farmers are not be able to decide what crop they can grow successfully from the land. In the present scenario, only alternative is adoption of Agro forestry.

**Demonstration of technique at demo village, Jamtara, Jabalpur**

Agro forestry could be a viable option for farm income diversification, fulfilling multiple needs of farmer like fodder for live stock, fuel wood for cooking, small timber for agriculture implements, leaf

mulch serve as manure, timber for furniture besides improving and maintaining soil fertility.

Recently, Honorable Prime minister of India, Shri Narendra Modi has launched "Soil Health Card Scheme (SHCS)" to control excess use of fertilizer, for the benefit of 14 crore farmers within next three years. The SHC will be useful to identify cause of soil deterioration with the excess use of chemical fertilizer. Shri Modi requested to Anna data (farmer) to save our "Dhartimata" by testing of soil and help to save up to Rs.50,000 in 3 acre of land. This card, which will carry crop wise recommendation of fertilizers required for farm lands, will help farmers identify health of soil and judiciously use of essential soil nutrients in standard

quantity. It is the need of hour for farmers to do away with traditional techniques and adopt scientific methods of agriculture to raise crop yields. Farmers should aware about his land quality and able to select beneficial crops accordingly. They should take extra care of Dhartimata (motherland) for extra income, as we care our health and body. If we care for the soil, it will care for

**Training to the forest officials and farmers under VVK programme at Jabalpur (M.P.)**

us and give more produce as green gold. In order to achieve target, it was rightly quoted in the national song "Vande Matram" that 'Sujalam Sufalam (well irrigated and fertile), it is necessary to nurture soil and SHCS is an innovative step towards fulfilling this mission. Soil testing could be a regular feature or mandatory before growing any crop cultivation. To facilitate this scheme smoothly, he was requested to the entrepreneur to establish soil testing laboratories in small towns where farmers can get easily tested their soil within a weak. He emphasized about the use of drip irrigation to utilize more crop per drop of water and to keep the land and soil away from the hazards of using water more than required. farmers are required to take up farming in three steps" firstly, carry on with traditional farming which they are doing, but adopt scientific and modern techniques, secondly, grow more trees on boundaries of your farm fields, which otherwise are kept unused, Thirdly, take up poultry, fisheries, dairy and other allied activities to raise their income.

Tropical Forest Research Institute, Jabalpur (M.P.) has already working on these issues since last 20 years. The Institute has facility to determine all the macro and micro nutrients, physical texture and type

**A group of farmers at experimental area of TFRI, Jabalpur**

of soil. The institute has standardized and developed complete package of practices for various agro forestry models for specific site conditions and need based to provide multiple output to the growers.

Agro forestry is a sustainable land management system which increases the overall productivity of land, combines the production of agricultural crops, tree crops

**An overview of Paddy-Bach model at TFRI, Jabalpur**

and forest trees especially multipurpose and /or animals simultaneously or sequentially on the same piece of land and applies management practices that are compatible with cultural patterns of local people. Agro forestry promises to help farmers/growers in increasing productivity, profitability and sustainability of production on their land which can be scientifically sound, ecologically desirable, practically feasible and socially acceptable to the farmers. Agro forestry has three main characteristics like productivity, sustainability and adoptability. Agro forestry can improve productivity in terms of tree products, improved yields of associated crops, reduction of inputs, and increased labour efficiency. By conserving the production potential of the resource base, mainly through the beneficial effects of woody perennials on soils, agro forestry can achieve and maintain conservation and fertility goals.

**Bach- Paddy (Agri-medicinal) model**

Bach – paddy (Acorus calamus –Oryza

**a view of Bach-paddy model adopted by farmer, barela of Jabalpur district**

sativa) model is most ideal for reclamation of water logged area. Bach can be grown as an additional crop with

Paddy without any significant loss of paddy yield. The B/C analysis of the system reveals a return of 1.57 in case and

**Double income from double cultivation bach+paddy from the system**

propogules and dried rhizomes per hectare and 1.29 in case of returns on propagules and essential oil per hectare. The model can generate Rs. 60,000-70,000/ha only by selling of Bach as an additional income with paddy crop as shown in the figures 1-4.

**Mature rhizome of *Acorus calamus, and paddy crop,* output of the model Teak-turmeric (silvi-medicinal) model**

Teak-turmeric (*Tectona grandis* – *Curcuma longa*) silvi-medicinal

**View of Teak-turmeric model at TFRI, Jabalpur (M.P.) and matured turmeric crop produced from teak-turmeric model.**

system proved to generate Rs.1 lakhs/ha applicable only for 12-14 year old teak plantation exist. Turmeric (*C. longa*) crop requires shade and sandy loam soil which is preferred by the teak species too.

**Teak-turmeric model adopted by the farmer of Devri village of Jabalpur district.**

Teak is a long rotation crop and needs inputs to maintain its plantation, it can be maintain by growing and selling turmeric crop matures within eight months as an intercrop and fetch intermittent income by selling the raw as well as planting material (fresh propagules), dry rhizomes, essential curcumin oil besides small timber for furniture and as pole from teak tree with B/C ratio of 1.45.

**Bamboo based silvi-agri system**

The bamboo-urad-wheat agro forestry

**Bamboo-urad-wheat silvi-agri model at TFRI, Jabalpur**

model has potential to provide B/C ratio of 1.69 over a period of 4 year. The model

***Phaseolus mungo* pulse from bamboo – urad silvi-agri model**

generates periodical income from pulses as kharif crop and wheat as rabi during the year.

Bamboo-urad (*Bambusa nutans* and *Dendrocalamus strictus* and

***Triticum aestivum* from bamboo –wheat silvi-agri model**

*Phaseolus mungo*) and bamboo-wheat (*B. nutans and D. strictus* –

**Matured wheat crop harvested from bamboo –wheat silvi-agri model**

*Triticum aestivum*) silvi- agri system is most suitable to generate additional income of Rs. 1.09 lakh /ha which includes Rs. 60,000-70,000 by selling urad and wheat from the first year and from bamboo Rs.40, 000 to 50,000/ha (as bamboo 4-5 culms/clumps can be harvest within four year @ Rs. 25- 40 per culm besides conserving the soil erosion of degraded land.

Extension and demonstrations of the developed technology is most important tool for transfer of technology among the farmers/growers carried out by the institute.

# Estimation of carbon sequestration in agroforestry systems

**Vikas Kumar**
Department of Silviculture and Agro forestry, College of Forestry, Vellanikkara
Kerala Agricultural University, KAU, Thrissur, Kerala 680656, India

The forest and tree cover of India is 78.92 million ha accounting for 24.01 per cent of the geographical area (ISFR, 2013). Agro forestry is contributing to achieve the national goal as desired tree cover from present less than 25 per cent to 33 per cent in the country can only be achieved by planting trees on farm field/bunds, especially in states that have low tree cover. Agro forestry has an important role in reducing vulnerability, increasing resilience of farming systems and buffering households against climate related risk in additional to providing livelihood security. Agro forestry practices are said to be characterized by four "I" words: intentional, intensive, integrated, and interactive (Gold and Garrett, 2009). Perhaps another one could be added: imprecise. This is not said in a pejorative sense. It only reflects the lack of precision in dealing with issues concerning agro forestry (Kumar and Nair, 2011). With the increase in area from 25.32 million ha to 53.0 million ha in next forty years, agro forestry will be contributing substantially in meeting the basic needs of the society through increased production and providing environmental benefits (Dhyani et al., 2013).

The role of land use systems in capturing atmospheric carbon dioxide ($CO_2$) and storing the C in plant parts and soil became an important area of research during the past decade. Agro forestry systems have indirect effects on carbon sequestration because they reduce harvesting pressure on natural forests which are the largest sinks for terrestrial carbon. Agro forestry attracted special attention as a C sequestration strategy following its recognition as a C sequestration activity under the afforestation and reforestation activities of the Kyoto Protocol. This was in recognition of the perceived advantages of the large volume of aboveground biomass and

deep root systems of trees in accomplishing that task. The amount of carbon in the above ground and below ground biomass of an agro forestry system is generally much higher than in an equivalent land-use system without trees (Murthy et al. 2013). In another estimate agro forestry contributes 19.30% of total C stock under different land uses. The potential of agro forestry systems as carbon sink varies depending upon the growth and nature of the tree species, species composition, age of trees, geographic location, local climatic factors and management regimes. The growing body of literature indicates that agro forestry systems has the potential to sequester large amounts of above and below ground carbon in addition to soil organic carbon enhancement, as compared to treeless farming systems. Most of these available reports on C sequestration in agro forestry systems are estimates of C stocks (Ajit *et al.*, 2013). How much C is, or potentially could be, accumulated and stored in above and belowground compartments of Agro forestry system under different conditions of ecology and management. The estimates range from 0.29 to 15.21 Mg $ha^{-1}$ $year^{-1}$ above ground, and 30–300 Mg C $ha^{-1}$ up to 1 meter depth in the soil (Nair *et al.* 2010).

**Carbon Sequestration**

During the past two decades, there has been a veritable explosion of the literature on C sequestration. Internet search engines and abstracting services are virtually flooded with all sorts of literature on all aspects of the process. Unfortunately, considerable variations exist among different user groups about the concept of C sequestration and the term is not used or understood uniformly in different contexts. This has led to serious difficulties in consolidating and synthesizing available reports and publications according to a uniform pattern and set of norms.

The United Nations Framework Convention on Climate Change (UNFCCC) defines carbon sequestration as the process of removing C from the atmosphere and depositing it in a reservoir. It entails the transfer of atmospheric $CO_2$, and its secure storage in long-lived pools (UNFCCC, 2007). From the agro forestry point of view, C sequestration

primarily involves the uptake of atmospheric $CO_2$ during photosynthesis and the transfer of field C into vegetation, detritus, and soil pools for "secure" (i.e. long-term) storage (Nair *et al.*, 2010).

Different agro forestry systems sequestering varied amount of carbon based on type of system, species composition, soil and climate. Some of the earliest studies of potential carbon storage in agro forestry systems and alternative land use systems in India has estimated a C sequestration of 68-228 Mg C $ha^{-1}$ (Dixon *et al.*, 1994) and studies from Jha et al. (2001) showed that agro forestry could store nearly 83.6 Mg C $ha^{-1}$. Average carbon storage by agro forestry practices, of which fertilizer trees is an integral part has been estimated as 9, 21, 50 and 63 Mg C $ha^{-1}$ in semi-arid, sub-humid, humid and temperate regions, respectively (Montagnini and Nair, 2004). Agro forestry representing a carbon sequestration potential of 391,000 MgC $yr^{-1}$ by 2010 and 586,000 MgC $yr^{-1}$ by 2040 (Jose, 2009). Carbon management through afforestation and reforestation in degraded natural forests is a useful option, but agro forestry is attractive because:

1. It sequesters carbon in vegetation and possibly in soils depending on the reconversion soil C.
2. The more intensive use of land for agricultural production reduces the need for slash-and burn or shifting cultivation, which contributes to deforestation.
3. The wood products produced under agro forestry serve as a substitute for similar products unsustainably harvested from the natural forest.
4. To the extent that agro forestry increases the income of farmers, it reduces the incentive for further extraction from the natural forest for income augmentation.

Based on the notion that tree incorporation in croplands and pastures would result in greater net C storage above and belowground (Haile et al., 2008). Agro forestry system are believed to have a higher potential to sequester C than pastures or field crops

growing under similar ecological conditions (Kirby and Potvin, 2007).The home gardens consisting higher biomass compared to other systems and arid zones agro forestry systems consisting more root biomass. The aboveground carbon stocks are 17 to 36 Mg C $ha^{-1}$ in tropical home gardens of Kerala (Kumar and Nair, 2011) and 21 to 65.6 Mg C $ha^{-1}$ in popular based systems of North India (Rizvi *et al.*, 2010). Despite of several researchers follows different methods for estimation of carbon sequestration but mainly in agro forestry system researchers or scientists can be follow aboveground, Belowground (soils and living biomass) and modeling concept.

*Measurement of Carbon Sequestration in Agro forestry Systems Aboveground (Vegetation)*

Estimation of tree biomass by whole-tree harvesting is an old approach: it consists of cutting down sample trees, separating various parts (stem, leaves, inflorescence, etc.), digging out and washing the roots, determining their dry weights from samples of each part, and adding them up to get the total biomass. After dividing up the harvested representative trees into their various components (branches, dead branches, branchlets, leaves, roots and fie roots), and determining their dry weight, the C content in each is measured. Using the data, allometric equations are developed as regression models with the measured variables such as diameter at breast height (DBH), total tree height or commercial bole height, and sometimes wood density, as the independent variables and total dry weight as the dependent variable. The destructive method of determining tree biomass, though comparatively accurate, is extremely time- and labor-intensive, especially for large trees.

*Measurement of Carbon Sequestration in Agro forestry Systems Belowground (Soils)*

Carbon sequestration in belowground is more difficulty than that for aboveground C. Organic C occurs in soils in a number of different forms including living root and hyphal biomass, microbial biomass, and as soil organic matter (SOM) in labile and more recalcitrant forms. The most common method of estimating the

amount of C sequestered in soils is based on soil analysis, whereby the C content in a sample of soil is determined (mass per unit mass of soil, such as g C per 100 g soil) and expressed usually in mega grams (Mg = $10^6$ g or tons) per hectare.

*Measurement of Carbon Sequestration in Agro forestry Systems Belowground Living Biomass*

The root-to-shoot ratio is therefore commonly used to estimate below ground living biomass. The ratios differ considerably among species and across ecological regions. In the absence of measured values, many researchers assume that the belowground biomass constitutes a defied portion of the aboveground biomass and the values so assumed range from 25% to 40% depending on such factors as nature of the plant and its root system and ecological conditions.

*Measurement of Carbon Sequestration in Agro forestry Systems Modeling*

The models are based on a set of assumptions that are formed from our understanding of ecological processes including tree growth, and decomposition processes in the soil. The CENTURY and RothC models are the most widely used soil C models. CENTURY models applicable for agricultural systems, forests, or savannas but not for integrated tree-crop systems such as agro forestry; adding agro forestry could be interesting and important to this model in order to improve its C sequestration estimates in global soils.

The RothC model (Rothamsted model), based on the long-term experiments studying organic matter on the Rothamsted sites in England, takes into consideration organic pools in terms of how labile they are. Although the parameters of the model are comparatively simple, the model may not be quite appropriate for predictions of tropical agro forestry sites.

**References:**

Ajit, Dhyani, S.K., Ram Newaj, Handa, A.K., Prasad, R., Alam, B., Rizvi, R.H., Gupta, G., Pandey, K.K., Jain, A. and Uma 2013. Modeling analysis of potential carbon sequestration under existing agro forestry systems in three districts of Indo-gangetic plains in

India. Agro forest Systems 87: 1129-1146.

Dhyani, S.K., Handa, A.K. and Uma 2013. Area under agro forestry in India: An Assessment for Present Status and Future Perspective. Indian J. Agro forestry 15(1): 1-11.

Dixon, R.K., Wimjum, J.K., Lee, J.J. and Schroeder, P.E. 1994. Integrated systems: assessing of promising agro forestry and alternative land use practices to enhance carbon conservation and sequestration. Clim Chn 30: 1–23.

Gold, M.A. and Garrett, H.E. 2009. Agro forestry nomenclature, concepts, and practices. In: Garrett HE (ed.) North American Agro forestry: an integrated science and practice, 2nd edn. American Society of Agronomy, Madison, pp 45–55.

Haile, S.G., Nair, P.K.R. and Nair, V.D. 2008. Carbon storage of different soil-size fractions in Florida silvopastoral systems. J Environ Qual 37: 1789–1797.

ISFR, 2013. Indian State of Forest Report. Prakash Javadekar, Ministry for Environment, Forestry and Climate Change.

Jha, M.N., Gupta, M.K. and Raina, A.K. 2001. Carbon Sequestration: Forest soil and land use management. Annals of Forestry 9: 249-256.

Jose, S (2009). Agro forestry for ecosystem services and environmental benefits: an overview. Agro forestry Systems 76: 1–10.

Kirby, K.R. and Potvin, C. 2007. Variation in carbon storage among tree species: implications for the management of a small-scale carbon sink project. For Ecol Manag 246: 208–221.

Kumar, B.M. and Nair, P.K.R. 2011. Carbon Sequestration potential of Agro forestry Systems opportunities and challenges. Springer Dordrecht Heidelberg London New York.

Montagnini, F. and Nair. P.K.R. 2004. Carbon sequestration: An underexploited environmental benefit of agro forestry systems. Agro forestry System 61: 281-295.

Murthy, I. K., Gupta, M., Tomar, S., Munsi, M., Tiwari, R., Hegde, G.T. and Ravindranath, NH (2013). Carbon sequestration potential of agro forestry systems in India. Journal of Earth Science & Climate Change 4(1): 1–7.

Nair, P.K.R., Nair, V.D., Kumar, B.M. and Showalter, J.M. 2010. Carbon sequestration in agro forestry systems. Adv Agron 108: 237–307.

Rizvi, R.H., Khare, D. and Handa, A.K. 2010. Construction and validation of models for timber volume of popular (Populus deltoides) planted in agro forestry in Hariyana. Indian Journal of Agricultural Sciences 80(9): 841-844.

UNFCCC, 2007. Report of the conference of parties on its thirteenth session, Bali, Indonesia. United Nations framework convention on climate change, Geneva.

# Two important medicinal plants of Telangana State, India.

**Dr. P. Shivakumar Singh**

Department of Post Graduate Studies and Research in Botany,
MVS Govt. Degree and PG College, Mahabubnagar-509338, Telangana, India.

**Abstract**

In the present report the 29th state Telangana's geographical conditions, profile, main crops, forest information shortly mentioned. After formation of the state, the government of Telangana has been declared sate flower and tree. The details of state flower and tree botanical names, family, distribution, common names, medicinal importance were discussed in scientifically. This may useful to all the researchers, readers, students in future.

## Introduction

Right now, the medicinal plants are extensively utilized throughout the world in two distinct areas of health management. They are traditional system of medicine and modern system of medicine. It has not only continued to be used for primary health care of the poor in developing countries, but has also been used in countries where conventional medicine is predominant in the national health care system. So in the part of concentrating in this view the Telangana government has been selected two important medicinal plants.

**Telangana State Profile**

Telangana state became the 29th state of India on 2 June 2014**,** consisting of the ten north – western districts of Andhra Pradesh. The city of Hyderabad will serve as the joint capital of Telangana state and Andhra Pradesh for up to ten years.

**India, Telangana state**

The Telangana state is spread over 1.14 lakh square kilometres, Its population (including that of Hyderabad) is 3.5 crore. The Telangana state comprises the districts of Adilabad, Nizamabad, Karimnagar, Medak, Warangal, Rangareddy, Khammam, Nalgonda and Mahabubnagar, apart from the metropolis of Hyderabad. It would border on Maharashtra, Karnataka and the residuary

state of Andhra Pradesh (Seemandhra). The region was once a part of the princely state of Hyderabad, ruled by the Nizams, which also included some parts

Telangana is bordered by the states of Andhra Pradesh to the south and east, Maharashtra to the north and north-west, Karnataka to the west and Chhattisgarh to the north-east. Telangana has an area of 114,840 square kilometres (44,340 sq mi), and a population of 35,286,757 (2011 census). Hyderabad, Secunderabad, Warangal, Karimnagar and Nizamabad are the major cities in Telangana State. The important Crops in this area are wheat, jowar cotton, groundnut, maize, sugarcane, Sunflower. Cottage industries like beedi making, handlooms, crafts.

**Telangana State flower**

**Botanical name:** *Senna auriculata*

**Family:** Ceasalpiniaceae

**Medicinal uses In:** Ayurveda and Folk.

**Distribution**

This species is probably native to India and Sri Lanka, globally distributed in Indo-Malesia. Within India, it is found in the dry zones Peninsular India, Western and Central India It is also cultivated in some parts of Punjab, Haryana, Uttar Pradesh and West Bengal, and often planted in gardens for ornament and as hedges.

**Common names:**

**Telugu:** Thangedu.

**Hindi:** anwal, aval.

**Kannada:** avara, avara-gida, avarakka.

**Marathi:** arsuai, avul, taravada.

**Sanskrit:** ahula, ahulya, ahulyam, avartaki.

**Tamil:** aavarai, akuli, anakavarai, anakavaraicceti.

**Medicinal uses**

This plant is said to contain a cardiac glucoside (sennapicrin) and sap, leaves and bark yield anthraquinones, while the latter contains tannins. The root is used in decoctions against fevers, diabetes, diseases of urinary system and constipation. The leaves have laxative properties. The dried flowers and flower buds are used as a substitute for tea in case of diabetes patients. It is also believed to improve the complexion in women. The powdered seed is also applied to the eye, in case of chronic purulent conjunctivitis. In Africa the bark and seeds are said to give relief in rheumatism, eye diseases, gonorrhea, diabetes and gout. The plant has been shown to

have antibacterial activity in the laboratory.

**Telangana State tree**

**Botanical Name:** *Prosopis cineraria* (L.) DRUCE

**Family:** Mimosaceae

**Medicinal uses In:** Ayurveda and Folk.

**Distribution:**

This species is globally distributed from Iran to India. Within India, it is found in the dry and arid regions on the alluvial plains.

**Common names:**

**Telugu:** Jammi, Shami.

**Hindi:** chonkar, jhand, khejari.

**Kannada:** banni, banni mara, kabanni.

**Marathi:** saundar, saunder, savandad.

**Sanskrit:** kesahantri, rajagiri, rajasakini.

**Tamil:** parambai, perumbe, seemaimullu.

**Medicinal uses**

Leaves are used in the treatment of skin diseases. The wood of *P. cineraria* is a good fuel source, and provides excellent charcoal plus firewood, fodder, green manure and goat-proof thorny fences. The leaves, called "Loong" in India and pods are consumed by livestock and are beneficial forage. In Rajasthan, India, *P. cineraria* is grown in an agro-forestry setting in conjunction with millet. The tree is well-suited for an agro-forestry setting, because it has a single-layered canopy, it is a nitrogen fixer (thus enriching the soil), and its deep roots avoid competition for water with crops.

jammi fruits or pods are locally called sangar or sangri. The dried pods locally called Kho-Kha are eaten. Dried pods also form rich animal feed, which is liked by all livestock. Green pods also form rich animal feed, which is prepared by drying the young boiled pods. The dried green sangri is used as a delicious dried vegetable which is very costly (Nearly Rs.400 per kg in market). Many Rajasthani families use the green and unripe pods (sangri) in preparation of curries and pickles.

# lQn xhMkj ;k 0gkbV xc ,o fu;=.k mik;

MkO ih0 ch0 eJke

ou dhV iHkkx, m".kdfVca/kh; ou vuql/kku laLFkku, tcyiqj

;g x.k dkfy;kslVjk] dy Ldjkcsh dk dhV g A e/; Hkkjr e ; lkxku] ckl]

**वयस्क कीट**

ccy] flLl] yeuxkl] lQn elyh] अश्वगंधा आदि की रोपणियों को काफी {kfr igpkrk g A bl x.k d *gkykfVfd;k duluxfu;k* o *gk-l jkVk* नाम के कीट महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, बिहार, xtjkr] rkfeyukM o मत्तरप्रदेश में fLFkr oujkif.k;k e dkQh mRikr epkr g A fgeky; {k= dh oujkif.k;k e *xfuM vyckl ikjlk* शंकुधारी वृक्षों के ik/kk dk {kfr igpkrk gA *gk-ikcyefVdk* lky o dhdj d ik/kk dk {kfr igpkrk g A

igpku %& ;g dhV Hkfe e 6 l-eh- l 50 l-eh- rd xgjkb e ik;k tkrk gA cjlkr e Hkfe d mijh lrg e vk जाता है । शरद ऋतु में भूमि के नीचे pyk tkrk g A bldk flj yky o शरीर सफेद रंग का होता है । ;g foJke voLFkk e vxth d ^lh* v{kj dh rjg gkrk g A bldh yckb 1 l-eh- l 5-6 l-eh- rd gkrh g A

{kfr dh ikdfr %&xc ;k xhMkj dkcfud inkFk ;Dr feVVh] [kkn] ik/k dh NkVh&NkVh tMk o e[; tM dh Nky dk [kkr g A o viuk Hkkstu <<u d fy, tMk d pkjk vkj dh Hkfe jxu l ml ue dj nr g A ftll ik/kk dk i;klr ek=k e ueh u feyu l o ej>kdj l[k tkr g A dN i tkfr;k d xc tMk dk [kk tkr g ftll eyk;e NkV ik/k l[k tkr g A o;Ld Hkx jki.kh d vklikl d cM



**अण्डे**

iMk dh ifRr;k jkr e [kkr g A thou pdz %& ekulu dh ckfj'k e

o;Ld Hkx jkr e tehu l fudydj vklikl d iMk dh ifRr;k [kkr jgr

इल्लियाँ

g A uj eknk dk feyu gkdj eknk Hkx jrhyh&nkeV feVVh e 5&6 vM nrh g A vMk l NkV xCl fudy vkr g vkj tehu e lMh&xyh ifRr;k ;k tMk dk [kkr jgr g A tc xhMkj dh voLFkk cMh gk tkrh g] rc ;g ik/kk d tMk ,o e[; tMk dk dkVr g] ftll ik/k l[ku yxr g A xhMkj voLFkk m".k कटिबंधीय प्रदेशों में 8–10 माह की gkrh g A

प्यूपा

jrhyh feVVh e xhMkj 100&150 l-eh- xgjkb rd ik, tkr g A tehu e ueh tlh&tlh de gkrh g ol&ol xhMkj xgjkb rd tkr gA प्यूपा (शंखी) voLFkk 7&14 fnu rd gkrh g A bl dhV dk xhMkj ,o l;ik voLFkk ekle ifjoru d mij fuHkj djrh g A jki.kh;k e bl dhV dk ekle ifjoru चित्र–1 में दर्शाया गया है । कार्बोनिक inkFk ;Dr jrhyh&nkeV feVVh bl dhV dk vM nu d fy, vkdf"kr djrh g A bl dhV dk thou&pd ijk gku e ,d lky dk le; yx tkrk g A bldh o;Ld voLFkk dk ^Hkx* dgr gA ;g eb l tu ekg तक शाम को जमीन से निकलते है blfy, bl ^eb ;k tu chVy* dgr gA

fu;=.k %&

1- ou jkif.k;k o D;kfj;k dk eb&tu l igy r;kj dj yuk pkfg, A tehu dh [knkb xgjh djuh pkfg, rkfd Hkxd mij vku d dkj.k if{k;k dk Hkk tu cu ld ;k /ki yxu l ej ld A

2- ekulu l igy vkj ekulu d दौरान प्रकाश पाश से रात्रि 7-30 l 11-00 ct rd Hkxk dk idMdj u"V dj nuk pkfg, A bll eknk Hkxk dh l[;k e deh vkrh g A

3- jki.kh ,o jkiou d vklikl yx g, iM tl /kok] iykl] rn] cj] lktk vkfn dh eb&tu ekg e NVkb dj nuk pkfg, ;k ekukdkVkQkl uked nok dk 0-05 प्रतिशत (36 ई-lh- dk 1-5 fe-yh- nok 1 yh- ikuh e ?kky cukdj½ ?kky dk fNMdko djuk pkfg,A ftll jkr d le; o;Ld Hkx bu iMk dh ifRr;k dk u [kk ld A

ou jkif.k;k e lQn xhMkj ¼gkbV xzc½ dk ekSleh ifjorZu

| क्यारियां | | | |
|---|---|---|---|
| Tku | | | |
| tqykbZ | | Ekknk Hkzxk dk vMk nuk | Tku |
| foxr o"kZ dh | | | tqykbZ |
| ebZ | Ok;Ld Hkzxk dk ifRr;k [kkuk | xhMkj | vxLr |
| Tku | Ok;Ld Hkzxk dk ifRr;k [kkuk Ekknk Hkzxk dk vMk nuk | | flrcj |
| tqykbZ | Ekknk Hkzxk dk vMk nuk | शंखी एवं भृंग | vDVcj |
| vxLr | | | Ukocj |
| flrcj | | | fnlcj |
| vDVcj | | | Tkuojh |
| Ukocj | | | Qjojh |
| fnlcj | | | EkkpZ |
| Tkuojh | | | vizSy |
| Qjojh | | Hkzxk dk fudyuk | ebZ |
| Ekkp | | | tqu |
| vizSy | | | tqykbZ |
| ebZ | | | |
| tqu | Ok;Ld Hkzxk dk fudyuk@ifRr;k dk [kkuk | | |
| vxys o"kZ dh D;kfj;k | | | orZeku o"kZ dh D;kfj;k |

4- ldjh xnu d feVVh d cruk dk nk D;kfj;k d chp e tehu dh lrg l feykr g, xkM dj mle FkkMk lk feVVh dk ry या कीटनाशक ?kkydj Hkj nu l Hkfe dh lrg ij jxr g, Hkx ble fxjdj u"V gk tkr g A

5- chtk dh cokbZ d fy, D;kfj;k r;kj djr le; 100 xke QkjV ;k FkheV ifr cM ¼10 eh × 1 eh½] feykus l xCl l cpko gk tkrk g A lkxkSu d jkif.k;k e ¼FkheV½ QkjV 10&tk 200 xke ifr cM ¼10 eh × 1 eh-½] Mkyu l lQn xhMkj d fu;=.k e lQyrk jgk g A (वैश्यमपायन एवं भंडारी 1981) । मध्यप्रदेश में कटंगा रोपणी, ckyk?kkV e ckl}hu Mkb, thuku

10 th 200 xke ifr cM Hkh lQy jgk g A ¼eJke vkfn] 1990½ gfj;k.kk d jfxLrkuh bykdk e dhdj dh jkif.k;k dh 10 eh × 1 eh- D;kjh e Dykjik;fjQkl 20 b-lh- dk i;kx Hkh bu dhVk d fu;=.k e lQy jgk g A ¼dekj] 1990½

6- vk"k/kh; ,o lxf/kr ik/kk d रोपणी में कोई भी कीटनाशक नहीं Mkyuk pkfg, A bll ik/kk ij कीटनाशक के अवशेष जमा होते g vkj ik/kk dh iofRr d L=kr ij iHkko iMdj ik/k dh x.koRrk e dkQh vlj fn[kkb iMrk g A bu ik/kk e Hkx d fu;=.k d fy, uhe ;k djt dh [kyh 10 fdyk ifr cM ¼10 eh × 1 eh- ½ d fglkc l Mky A ckt kj e miyC/k uhe;Dr nokvk dk i;kx dj A todh; कीटनाशक जैसे बायोप्रो नामक nok 50 xke nl yhVj ikuh e ?kkydj ifr cM ¼10 eh × 1 eh- ½ d fglkc l ik/kk d vklikl ;k 2-5 l-eh- dh uky cukdj Mkyuk pkfg, A

lanHkZ


जोशी, के-lh- ¼1992½ gM cd vkQ QkjLV tykth ,M ,Vkekykth vkfj;Vy ,Vjikbtl 25 , dkyhnkl jkM] ngjknu i"B l- 384

Bkdj] ,e- ,y-] ,l dekj] , uxh ,o Mh-,l-jkor ¼1989½ dfedy dVky vkQ VjekbVl bu *;dfylVl gk;fcM bfM ;u QkjLVj* 115¼10] 733&744-

Bkdj] ,e- ,y-¼2000½ QkjLV bVkekykth ¼bdkykth ,M euteV½ i"B l[;k 326&379-

eJke] ih0ch0] ikBd] ,l-lh- ,o tekynnhu ¼1990½ bQDV vkQ le lkby blDVhlkbMl bu dVkfyx n etj blDV iLV bu Vhd uljh *bfM;u QkjLVj* 116¼3¼206&213

eJke] ih0ch0] ¼2000½ ou d gkfudkjd dhV o mudk fu;=.k e [kUuk c/k 7 fryd ekx] ngjknu i"B l[;k 116-

eJke] ih-ch-¼2005½] fdlkuk d vuHko] vk"k/kh; ik/kk ij yxu oky e[; dhV ,o mudk jlk;u jfgr fu;=.k A yDpj ukV ok-v-ek-l-fo-d- 2005 i"B l[;k ¼1&5½

वैश्यपायu] ,l-,e-,o vkj-,l-HkMkjh ¼1981½ dfedy dVky vkQ 0gkbV xC l *gkykVkbfd;k blykfjl* bu Vhd uljht@ *iLVkykth* 5¼15&20-

# मधमाशी : परागसिंचनाद्वारे पीक उत्पादन वाढवणारे प्रभावी कीटक

**शालिनी भोवते**
**वानिकी अनुसंधान एवं मानव संसाधन विकास केंद्र, छिंदवाडा**

भारत हा कृषिप्रधान देश असून सुमारे ६० टक्के लोक कृषि आणि कृषि आधारित उद्योगावर अवलंबून आहेत. रोजगार निर्मिति आणि अन्नधान्य उत्पन्नाच्या वाढीतून स्वयंपूर्तता या दोन्ही गोष्टी कृषि व्यवसाय साध्य करू शकतो. परागसिंचनाद्वारे पिकांचे

परागसिंचक मधमाशी

हेक्टरी उत्पादनात वाढ आणि त्याच बरोबर स्वयंरोजगार या दोन्ही बाबतीत मधमाश्यापालन व्यवसाय कृषि व्यवसायात महत्वाची भूमिका बजावू शकतो.

परागसिंचन – एका फुलाच्या पुंकेसरामधील परागकण दुसरया फुलांच्या स्त्रीकेसरावर जाऊन पड़ने म्हणजे परागसिंचन (Pollination). बरयाच वनस्पती अशा परागसिंचनाकरिता कीटकांवर अवलंबून असतात.एका फुलाच्या स्त्रीकेसराशी त्याच फुलाच्या किंवा त्याच रोपटयाच्या इतर फुलांच्या पुंकेसराचे परागसिंचन झाले तर स्वपरागसिंचन होते (self pollination ). उलट त्याच जातीच्या वेगळ्या रोपटयाच्या फुलांचे पराग जर त्या फुलात आले तर ते परपरागसिंचन होते. या क्रियेत बिजधारणा चांगली होते व पीक जास्त मिळते. जवळ-जवळ ८० टक्के फळपिके आणि भाजीपिके, तशीच पुष्कळशी धान्यपिके फळधारणे करिता परपरागसिंचनावर अवलंबून असतात. ही क्रिया करणारया कीटकात मधमाश्या या सर्वात जास्त प्रभावी परागसिंचन करणारया आहेत.

भारतात मधमाश्यांच्या चार जाती आढळतात.

एपिस डोरसाटा- या मधमाश्या आकराने मोठया असतात तसेच विचरणशील आणि अत्यंत क्रोधी असतात.यांच्या द्वारे मध उत्पादनही जास्त होते. एका वसाहतीतून वर्षाला २५ ते ५० किलोग्राम मधाचे उत्पादन होते. साधारणतः बाजरात विक्री साठी आलेले मध हे याच मधमाशीचे असते.

एपिस इंडिका- या मधमाश्या आकराने छोटया असतात तसेच एका वसाहतीतून वर्षाला ६ ते ८ किलोग्राम मधाचे उत्पादन होते. या जातीच्या मधमाश्या सहजतेने पाळल्या जाऊ शकतात.

एपिस फ्लोरिया- या मधमाश्या इतर तीन प्रकारच्या मधमाश्या पेक्षा आकराने छोटया असतात. एका वसाहतीतून वर्षाला ०.५ ते १ किलोग्राम मधाचे उत्पादन होते; तसेच यांच्या

एपिस डोरसाटा मधमाशीचे पोळे

द्वारे एकत्र केले गेलेले मध हे औषधिच्या दृष्टीने जास्त उपयोगी असते.

मेलीपोना – या छोटया आकराच्या मधमाश्या असून यांच्या मधे डंक नसतो आणि यांचे समुदायही छोटे असतात. याशिवाय एपिस मेलिफेरा ( युरोपियन मधमाशी) ज्या युरोप, आणि अन्य देशातही आढळतात; या मधमाश्या सुध्दा पाळल्या जाऊ शकतात आणि यांच्या द्वारे मध उत्पादनही जास्त होते.

शेती , वन, आणि बागायती क्षेत्रात निसर्गात उपलब्ध असलेले अनेक कीटक आहेत परन्तु मधमाश्या व्यतिरिक्त इतर कीटकामधे एकाच जातीच्या पिकावर सातत्याने मकरंद-पराग गोळा करण्याची प्रवृत्ति नसते.या उलट मधमाश्या एकदा एका पिकाच्या फुलोरयावरुन मकरंद-पराग गोळा करू लागल्या की त्या पिकाचा फुलोरा संपेर्यत एकनिष्ठेने त्याच फुलोरयाचा मकरंद-पराग गोळा करतात.या त्यांच्या स्वभाव वैशिष्टयामुळे (floral fidelity) इतर कोठल्याही कीटकापेक्षा मधमाश्या जास्त कार्यक्षम आणि खात्रीच्या परागसिंचक समजल्या जातात.

मधमाश्या या जास्त कार्यक्षम परागसिंचक आहेत याची कारणे खालील प्रमाणे आहेत.

- मधमाश्यांच्या एका वसाहतीत साधरणतः ५००० ते १०००० हजार मधमाश्या असतात इतक्या मोठया संखेने परागसिंचक इतर दुसरया कीटकात नसतात.
- मधमाश्यामधे मध आणि पराग साठविण्याची वृत्ति असते.त्यामुळे मकरंद-पराग गोळा करण्यासाठी त्या एखाद्या पिकावर दिवसभर फेरया करतात ज्यामुळे परागीभवनाचे काम खात्रीपूर्वक आणि मोठया प्रमाणात होते.
- मधमाश्यांच्या शरीरावर असंख्य केस असतात या केसात अनेक परागकण अडकतात आणि ते दुसरया फुलांवर पडून परपरागसिंचन होते.
- काही कीटक ऋतुमाना नुसार सुप्तावस्थेत जातात; परंतू मधमाश्यामधे सुप्तावस्था नसते त्या परागीभवनासाठी वर्षभर उपलब्ध असतात.
- मधमाश्यापालनात अनेक तंत्रे उपलब्ध झाली आहेत. पाळीव मधमाश्यांच्या वसाहतींचे रातोरात १०० ते २०० किलोमीटर स्थलांतर करून हुकमी परागसिंचन करता येते.

**मधमाश्यापासून आर्थिक लाभ-**

मधमाश्यापासून मध-मेण-पराग प्राप्त होते .मध हा अतिशय पौष्टिक पदार्थ असून औषधियुक्त आहे. मेणाचा उपयोग चर्मोद्योग, ओतकाम, लाकड़ी वस्तुंना संरक्षक लेप देण्यासाठी होतो. पराग औषधी तयार करण्यासाठी उपयोगात आणले जाते.तसेच अनेक प्रकारच्या फूलांमधे परागसिंचनाचे कार्य मधमाश्याद्वारे संपन्न होउन बिजधारणा चांगली होते.बियाणांचा आकार आणि संख्याही वाढते, तसेच झाडाची फळे गळून पडण्याचे प्रमाण कमी होते, फळसंच वाढतो एकंदरीत उत्पन्न वाढते.

**जीवन वृत्त-**

मधमाशी एक सामाजिक कीट आहे. यांच्या एका वसाहतीत ५००० ते १०००० मधमाश्या असतात. मधमाश्यांची पोळया तील संख्या ऋतूंवर तसेच परिसरावर अवलंबून असते. प्रत्येक वसाहतीत एक राणी, २०० ते ३०० नर आणि उरलेले कामगार असतात.एक राणी आपल्या जीवनात साधारणतः १,५०,००० अंडी देते. राणीची जेव्हा उत्पादन क्षमता संपते किंवा एखादी कामगार मधमाशी रुग्ण किंवा पंखहीन होते तेव्हा कामगार मधमाशी त्यांना मारते.

मधमाश्यांच्या समुदायात त्यांच्या संरचनेनुसार तीन प्रकारच्या ( जाती) मधमाश्या असतात. राणी ( पुनरुत्पादक मधमाशी), नर आणि कामगार मधमाशी.या तिन्ही जातीचे अस्तित्व एकमेकांवर अवलंबून असते. प्रत्येक जाती वसाहतीतील विविध कार्य संपन्न करण्यासाठी नेमलेल्या असतात.

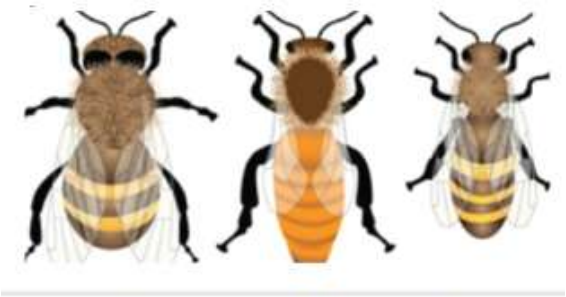


**राणी** –. कामगार आणि राणी मधमाशीचा जन्म एकाच प्रकारच्या अंडयातून होतो परंतू जेव्हा कामगार मधमाश्या एखाद्या लार्व्याला राणी बनविण्याचा निर्णय घेतात तेव्हा ते त्या लार्व्याला एक विशेष प्रकारचे भोजन देणे सुरु करतात ज्याला इंग्रजीमध्ये 'रॉयल जेली' म्हणतात.अशाप्रकारे ज्या लार्व्याला त्याच्या पूर्ण जीवन काळात हे भोजन दिले जाते त्या लार्व्या पासून भविष्यात राणी मधमाशी बनते. राणीचा आकार परिवारातील अन्य सदस्या मधे मोठा असतो आणि प्रत्तेक वसाहतीत एकच राणी असते. तिचे कार्य पुनरुत्पादनाचे असते. ती फरटीलाइज तसेच अनफरटीलाइज अंडे देते. आणि विशेष रसायन ( फेरोमोंस) तयार करते.

**नरकीट-** हे राणी पेक्षा छोटे असतात. यांचे मेंडिबल लहान आणि टोकदार असतात. नरकीटांची उत्पत्ति वसंत ऋतूमधे अनफरटीलाइज अंडया द्वारे होते.हे कीट

स्वतःचे पोषण करण्यास सक्षम नसतात.यांचे कार्य राणी सोबत संभोग करण्याचे असते.

**कामगार कीटक** – समुदायात यांची संख्या सर्वात जास्त असते.हे नर किटका पेक्षा छोटे व पातळ असतात. समुदायाच्या सम्पूर्ण व्यवस्थेचे उत्तरदायित्व कामगार कीटकांचे असते. त्यांचे कार्य पोळयांचे निर्माण करणे, त्यांची दुरुस्ती करणे तसेच मकरंद –परागकण एकत्र करणे, नवजात लार्वा किटांचे पालन करणे आणि शत्रू पासून समूदायाचे रक्षण करणे हे असते.

**मधमाशीपालन-**

कृत्रिम पद्धतीने मधमाशीचे पालन लाकडापासून तयार केलेल्या पेटीत केले जाते. मधमाशीपालनासाठी मधुपेटी, धुमक, मधुनिषकासक यंत्र, मेणपत्रे, पाकपात्र, चाकू इ. वस्तूंची आवश्यकता असते.

**मधमाश्यामुळे खालील वनस्पति/ पिकांमधे परपरागीभवन होउन उत्पादनात वाढ होते**

कृषीपिके – सूर्यफुल, मोहरी, तूर, तीळ बागायतीपिके – नारळ, पेरू, बोर, मोसंबी, शेवगाकृषीवनीकरण वनस्पती – नीलगिरी, काजू, बेल, कापूस, सेसबॅनिया स्पेसीज, बाभूळ, कॅसिया स्पेसीज, सिरिस, अर्जुन, आवळा,

वनीकरण वनस्पती- साग, चिंच, महुआ, साल, करंज, पलास, सिस्सू.

मधमाश्या हजारों वर्षा पासून फुलणारया वनस्पती मधे परागीभवन करून त्यांचे पृथ्वी वरील अस्तित्व टिकविण्याचे महान कार्य करीत आहेत. तसेच वननिर्मिति आणि पिकांच्या उत्पादन वाढीसाठी सर्वच जातीच्या मधमाश्यांचे अतिशय महत्व आहे. त्यामुळे त्यांचे संरक्षण आणि संवर्धन करणे मानवाच्या हिताचे आहे.

# पश्चिमी घाट का कास पठार (Kas Plateau)

**डॉ. संजय पौनीकर एंवम डॉ. नितिन कुलकर्णी**
**वन कीट विज्ञान प्रभाग, उष्ण कटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर**

भारत का पश्चिमी घाट (Western Ghats) अपनी विविध पौधो, पुष्पों एंव वन्य प्राणीयों की स्थानीय, दुर्लभ और विलुप्त होती प्रजातियों की जैव विविधता के लिए विश्व भर में पहचाना जाता है। पश्चिमी घाट पर्वतों की एक लंबी श्रृंखला है जो भारत के ६ प्रमुख राज्यों गुजरात, महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, तामिलनाडू और केरला से होकर गुजरती है। पश्चिमी घाट कों सह्याद्री पर्वत के नाम से भी जाना जाता है। यह पर्वतों की श्रृंखला १६०० कि.मी में फैली है। पश्चिमी घाट बहुत सारी छोटी-बड़ी नदियों का उद्गम स्थान है, इनमे गोदावरी, कृष्णा, कावेरी नदी प्रमुख है। ये एक सदाहरित उष्ण कटिबंधीय वनों से घिरा घाट है, जो विश्व में तेजी से विलुप्त होते 325 तरह के पुष्पों एवं जीवों के प्रजातियों का घर है। पश्चिमी घाट में विविध तरह के बहुत सारे छोटे-बड़े पठार (Plateau) है। इनमें से एक कास पठार है, जो अपनी फूलों की खिलने की विशेषताओं के लिए विश्व में पहचाना जाता है।

कास पठार (Plateau) को बहुत सारे फूलो को एक साथ खिलने कि वजह से कास पुष्प पठार (Plateau of Flowers) के नाम से भी जाना जाता है। कास पठार पश्चिमी घाट के सहयाद्री क्षेत्र एंव महाराष्ट्र राज्य के सतारा जिले मे स्थित है। यह सतारा शहर से 23 कि.मी. के अंतर पर है। कास पठार समुद्र तल से 1213 मीटर ऊपर है। यहा बरसात का औसत 4000 मी. मी. है। कास पठार विविध प्रकार के छोटे-बड़े पतले पत्थरो, मिट्टी और अन्य द्रव्यो से बना हुआ पठार है। कास नाम कासा नाम के पेड़ (*Elaeocarpus glandulosus*) से निर्मित

हुआ है। इस पेड़ के पत्ते हरे से लाल हो जाते है। कास पठार 1792 हेक्टर के विस्तृत क्षेत्र मे घास के मैदान की तरह फैला हुआ है। मानसून काल के अगस्त–सितंबर माह मे पूरा घास का

**कास पुष्प पठार**

मैदान सुंदर रंगबिरंगें फूलो में बदल जाता है, ऐसा लगता है कि पूरा का पूरा क्षेत्र विविध रंगो के गालिचा से ढक गया है। विविध प्रजातयों के हजारो फूलों से भर जाता है, जिसे फूलों की घाटी (Valley of Flowers) के नाम से भी दुनिया भर में पहचाना जाता है। कास पठार मे पुष्पों, बेलों, आर्किड़स की विविधता भरी उच्च कोटी की जैवविविधता पायी जाती है। यहॉ पर 850 से भी ज्यादा फूलों, घास, औषधी एंव झाड़ी नुमा पौधो की प्रजातियॉ पायी जाती है। इसमें से 650 प्रजातियों को आई.सू.सी.एन. (International Union for Conservation of Nature) के रेड बुक डाटा (Red Book Data) समावेश किया गया है, इसमे से 39 प्रजातियॉ सिर्फ कास पठार में ही पायी जाती है। इनमें औषधी वनस्पतियों प्रजातियों का ज्यादा समावेश है। यहॉ पर ऐसी भी प्रजातियॉ पायी जाती है, जो वनस्पती विज्ञान के लिये नयी होती है। यहॉ पर बहुत सारी स्थानीय एंव विलुप्ती की कगार पर खड़ी प्रजातियॉ भी पायी जाती है। यहा कि सूक्ष्म जलवायु (Micro climate) विविध प्रजातियों के फूलों के लिए बहुत ही पोषक है। सफेद हबेनेरिया (Ground Orchids), पीला सोनकी (Bright yellow Sonki), कीटक भक्षी पौधा (Utricularia- Sita's tears) और ड्रोसेरा (Drosera) जैसे पौधो की प्रजातियॉ पायी जाती है। यहॉ पर स्ट्रोबीलॅन्थस (Strobilanthus) नाम के फूल पाये जाते है, जो केवल प्रत्येक 7 से 9 साल में एक बार खिलते है। कास पठार की एक अत्यंत दुर्लभ वनस्पति जिसका नाम अपोनोजेटॉन सातारन्सीस (*Aponogeton satarensis*) सिर्फ महाराष्ट्र के सतारा जिले में पायी जाती है, इसलिए इस जिले के वैभव के लिए सातारन्सीस नाम दिया गया है।

यहॉ पर विविध प्रकार के प्राणियों की जिसमें कीटकों एंव विविध प्रकार कि तितलियों की 32 प्रजातियॉ पायी जाती है। मछलिओं, उभयचरो की 37 प्रजाति, सरीसृप प्राणीयों की 19, सस्तन प्राणीयों की 10 एंव पक्षीयों की 30 प्रजातीयॉ कास पठार पर पायी जाती है। पक्षीयों मे मालाबार लार्क, पिपीट, ईगल और क्रेस्टेल पाये जाते है।

**कास पुष्प पठार**

मानसून काल में पौधो की हजारों प्रजातियों के फूल एक साथ खिलते है जिससे ३ से ४ सप्ताह तक खिले हुये बहुत सारे फूलों की बहार आती है एवं एक साथ देखने को मिलते है। इस नजारो को देखने के लिए और अनुसंधान के लिए दुनिया भर से हजारों पर्यटक, वैज्ञानिक, अनुसंधानकर्ता, प्रकृति प्रेमी, खोजकर्ता, विद्यार्थीयों की भीड़ इस माह मे कास पठार पर उमड़ पडती है। कास पुष्प पठार में पुष्प और जंगली वनस्पति हजारो प्रजातियॉ होने के कारण यहॉ का वातावरण बहुत ही सुदंर औस रंगीबिरंगी हो जाता है, कभी सफेद, कभी लाल, नीला, हरा, पीला, गुलाबी और कितने सारे रंगो के फूलों की वजह से ये परिसर इंद्रधनुष्यों की बिखरी हुई छटा जैसा लगता है। इस परिदृश्य को देखने वालों को सपनों मे खोये जैसा लगता है। कास पुष्प पठार को युनेस्को द्वारा विश्व प्राकृतिक धरोवर (World Natural Heritage Site) के रूप मे साल 2012 को मान्यता प्राप्त हुयी है।

इस कास पठार को देखने का मौका मुझे सतारा के शासकीय दौरा 9 जनवरी से 24 जनवरी 2014 के दौरान मिला। महाराष्ट्र के सतारा जिले के 40 गांवो की वनों की स्थिती क्या है तथा यहॉ के लोगों की गतिविधियों से वनों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है इसका अध्ययन करने के लिये एक टीम गयी थी।

कास पठार की जैव विविधता खतरे से घिरी है। मानवी दबाव एंव उनकी गतिविधियॉ जैसे जंगल काटकर जमीन

को खेती के लिए अतिक्रमण करना। अति खनन की वजह से जमीन का जहॉ–तहॉ से कटाव हो गया है। लाखो पर्यटको की आवाजाही एंव उनके वाहनो से वहॉ पर प्रदूषण बढ़ा है एंव वहॉ के पर्यावरण और जैव विविधता को बहुत बड़े खतरे का सामना करना पड़ रहा है। कास पठार की जैवविविधता का संरक्षण तथा वहॉ की फूलों की घाटी का संर्वधन एंव संरक्षित करना बहुत जरूरी है।

पश्चिमी घाट का कास पुष्प पठार भारत की मूल्यवान धरोवर है। इस विश्व प्राकृतिक धरोवर को बचाना हम सब का कर्तव्य है।

# Ethno medicinal uses of tree species prevalent among tribal communities in Madhya Pradesh

Dr Rajiv Rai
Tropical Forest Research Institute Jabalpur

## Introduction

Tribal people and aboriginals all over the world use enormous range of wild plants for their basic needs, sustenance and livelihood. They have developed unique understanding of the forest resources and have passed on their traditions, taboos, folklore from one generation to another. The state of Madhya Pradesh is situated almost in the heart of Indian Peninsula and

***Butea monosperma*** **seeds**

has largest concentration for tribal population, about 28% of the total state's population (Anon, 2001; Maheshwari, 1996; Rai, 2004). The total forest cover in the state comprises of 76,429 sq. km. area. and about is 30.8% of states geographic area (FSI, 2003; Pandey, 2005). A large number of medicinal plants are found in state used by tribal communities (Sabena, 1988; Oomachan and Srivastava, 1996; Rai, 2004; Rai, 2006).

Madhya Pradesh is one of the largest tribal

***Bacopa monnieri***

dominated state in central India. There are 28 tribal communities spread over the state comprising of 19.24% population out of the total population in the state. The northern part of the state is mostly dominated by Agaria, Sahariya, Mijhiwar, Damor, Dhanwar and Saur tribes. The central part of Madhya Pradesh has dominance of Baiga, Gond, Bhariya, Bhujiya, Birhor and Pardhi.

**Baiga tribe Baiga chak Dindori district MP**

The eastern part of Madhya Pradesh has dominance of Kamar, Kol, Manjhi, Nagesia, Panika and Pao tribes. The western part of Madhya Pradesh has dominance of Bhil, Bhilala, Korku and Bhil – Mina tribes

(Tewari, 1984; Rai *et.al*., 1996; Rai *et.al*, 2004; Rai, 2006).

Sapura plateau, Bundelkhand region, Malawi plateau Chambal range and Nimar plateau in the west of Madhya Pradesh. The tribal pockets cover districts of Mandla. The tribal pockets found in the state exist in Maikal range, Vindhya Range.

***Stereospermum chelonoides***

Dindori, Shahdol, Jabalpur, Seoni, Hoshagabad, Harda, Betul , Raisen, Bhopal , Rewa, Satna Chhatrapur, Sagar, Dhar , Jhabua and Nimar in the west. The major tribes which exists in state of Madhya Pradesh such as Beige, Bhariya, Birhor, Bhil, Bhilala Gonad, Korku, Pardhi tribes (Tewari,1984; Buch, 1991; Rai, 2004 & Rai 2007 ).

Keeping in view of vastness of forest area and richness of vegetation, systematic efforts to exploit the valuable potential is lacking with exception to sporadic attempts being made as evidenced by review of literature being done for investigators earned with Madhya Pradesh on traditional health care Bhalla et.al. (1992), Jain (1962, 1963, 1975, 1981), Jain and Tarafdar (1963), Maheshwari (1984, 1989, 1996); Maheshwari and Dwivedi (1988); Oomachen and Srivastava (1996), Pandey et.al. (1991); Pandey (1998); Pandey (2005); Ram Prasad et al. al. (1990); Rai et. al. (1996); Rai et. al. (2002), Rai et. al. (2003), Rai et. al. (2004); Rai and Nath (2004); Rai and Nath (2005); Rai (2006); Rai and Nath (2006); Rai (2007); Saxena (1988); Saxena and Shukla; (1971); Saxena (1988) and Tewari (1984).

The use of medicinal plants in tribal health care is prevalent all over the world especially in developing countries like India in the tribal pockets has significantly contributed towards primary health. A large number of tribal population in tribal pockets of Satpura plateau, Vindhya range, Bundelkhand region, Chambal valley is living in forest fringes are largely dependent on forest for food, fodder, shelter, medicines and social and livelihood needs (Tewari,

***Shorea robusta***

1984; Jain, 1988; Bhalla, 1992; Rai, 2004; Shukla, 2004). Most of the area comprises

of undulating plateau densely covered with thick forest cover and tribal are inhabited at hill tops, foot hills and on plateau in tribal pockets of various district in Madhya Pradesh (Saxena ,1988; Ram Prasad et al., 1990; Bhattacharya et al., 1991, 2002, 2003, 2004). The study has been conducted



***Flowers Celastrus paniculata* Tree seeds**

to enumerate lesser known ethno-medicinal uses from major tribes which exists in state of Madhya Pradesh such as Baiga, Bhariya, Birhor, Bhil, Bhilala, Gond, Korku and Pardhi tribes

**Material and methods**

The study has been conducted to document lesser known medicinal uses of tree species from major tribes which exists in state of Madhya Pradesh such as Baiga, Bhariya, Birhor, Bhil, Bhilala Gond, Korku, Kol and Pardhi tribes. The state of Madhya Pradesh is situated in between 17 ˚- 48 ′ - 45 ″ North to 2 6 ˚- 57 ′ - 15 ″ North latitude and is extended from 74 ˚- 27 ′ - 45 ″ to 84 ˚-30 ′ - 35 ″ East of longitude. The Baiga tribes, Bhariya and Korku tribes are one of the most primitive tribes which are inhabited in isolated places inaccessible at hilly slopes in the state (Jain, 1963; Tewari, 1984; Jain, 1988; Ram Prasad, 1990; Maheshwari, 1996; Rai et al., 2003; Rai and Nath, 2004; Pandey, 2005).

Field trips were conducted in different seasons in tribal pockets of Madhya Pradesh in districts of Sehore, Bhopal, Raisen, Betul, Hoshangabad, Harda, Seoni, Chhindawara, Rewa, Umariya, Shahdol, Dindori, Mandla and Jabalpur in a period of four year from 2002 – 2006 in different seasons i.e. rainy, winter and summer season of the year, in the aforesaid tribal pockets in selected villages as shown in table –1 , to record tree species with ethno-medicinal uses of tree parts being utilized by the tribes for the cure of various diseases have been documented during the study.

***Buchnania lanzan* Tree bark**

During the visits a number of elderly person of tribal communities, traditional herbal healers belonging to different tribal communities were contacted and as details presented in table –1. The information was

collected through interview, observations and discussion held during field survey. The discussion revealed local name of species, tree part used, formulation of herbal drug used by traditional healers and tribal communities. The species were scientifically identified with their botanical names and author index. The plants were identified by taxonomist and





***Pongammia pinnata*** **Flowers**

herbarium were prepared and further verified with flora. The information recorded in field was further screened in laboratory as per work pertaining to Indian ethno-botany and plants recorded by Chopra et.al. (1965), Chopra et al. (1982); Nadkarni (1982); Kapur (1990); Jain (1975, 1981, 1991); Sathpathy and Panda (1992); Jain (1996) to distinguish the information already known, reported and published by taxonomists and ethno-botanist and little known and hitter unknown and unpublished work. The unpublished information has been included in the present investigation.

**Results and Discussion**

In the present study enumeration of lesser known ethno-medicinal uses of tree species prevalent among major tribal communities as Baiga, Bhariya, Birhor, Bhil, Bhilala, Gond, Korku and Pardhi tribes which exists in state of Madhya Pradesh and using tree species and their parts in tribal pockets and tree species conserved by tribes as per magico-religious belief have been tabulated precisely intable-2 . The information on local name, family, tree species, plant part used, formulation of drug used in cure of ailment is presented. Traditionally the tribal society is dependent on tree species for its subsistence.

A large number of species are being used for medicinal uses by tribal communities and traditional herbal healers (Vaidyas, Ojhas, Guniyas) in tribal pockets utilizing tree species and their parts such as roots,



***Terminalia arjuna***

bark, stem, leaves, flowers, fruits, gum etc. as antidote for snake - bite and scorpion sting, cure of headache and body pain, boils and sores, arthritis, rheumatic pain,

paralysis, diarrhoea, dysentery, skin infection: eczema, itching and scabies, jaundice, diabetes, abortifacient, measles, tumor and in cure of other prominent diseases. The Twenty two uses of medicinal uses of trees is documented during the study are described in table –1.

In every ethnic group there exists a traditional health care system, which is prevalent and popular among their community only as per tribal culture and traditions. The indigenous society has always been associated with nature for their needs with respect to health care system, food and sustenance. The tribal communities in India have given first and foremost importance to their traditional health care (Darshan, 1989).

***Lannea grandis*** **Flowers**

The nature has bestowed the state of Madhya Pradesh with enormous wealth of medicinal flora. A large number of traditional herbal healer belong to different ethnic group and inhabitant in tribal pockets are utilizing these flora as has been evidenced by information recorded from different tribal pockets and tribes presented in table -1.

***Aegle marmelos*** **Fruits**

The earlier record for study conducted in state by Jain and Tarafdar (1963); Saxena and Shukla (1971); Jain (1988); Ram Prasad et al. (1990), Bhalla et.al (1992); Rai et. al. (1996); Rai et al. (2003); Rai et.al. (2004); Rai (2004); Rai and Nath ( 2004); Rai (2006) and Rai (2007) on ethno-medicinal uses on tribes in Madhya Pradesh were compared with the information documented during the present investigation and earlier work reported . It was observed that this information documented during the present investigation by use of specific tree species and their part by specific tribe

***Diospyros melanoxylon*** **Fruits**

such as Biaga, Bhariya, Gond, Korku, Kol and Pardhi tribes along with preparation of herbal formulation in

cure of ailments such as antidote for snake - bite and scorpion sting, cure of headache and body pain, boils and sores, arthritis , rheumatic pain paralysis, diarrhea, dysentery, skin infection : eczema, itching and scabies, jaundice,

**Bhariya tribes of Patalkot valley MP**

diabetes, abortifacient, measles, tumor and in cure of other prominent diseases were unpublished earlier and hence are lesser known ethno- medicinal uses. These tribes are utilizing tree species and

**Herbal oil**

their parts since several hundreds of year and they believe that God and Goddess are living in these tree species due to their supernatural power the tree parts of the species cure the ailments (Maheshwari, 1984, 1966; Jain, 1988; Buch, 1991; Rai et al., 1996). These folk healers have inherited the art of healing and curing the patients utilizing forest flora.

**Conclusion**

In the present study medicinal uses of tree species of tribes as Baiga, Bhariya, Birhor, Bhil, Bhilala Gond, Korku, Kol and Pardhi was documented from twenty two tree species used in cure of ailments such as Eczema, Itching, Scabies, Headache, Body pain, Bone fracture, Boils and sores, Diabetes, Jaundice, Hairfall, baldness, Rheumatic pain, Paralysis, Diarrhoea , Dysentry and snake bite. **T**ribes in state of Madhya Pradesh are large in number and have wide distribution

**Tribal Market MP**

and immense knowledge for medicinal values of plants and trees found in the vicinity of forests. Most of the information are passed within the tribal community through oral communication

from one generation to another and are specific to the tribal community and tribal

**Table 1: Ethno-medicinal uses of tree species prevalent among Baiga, Bhariya, Birhor, Bhilala, Korku, Gond, Pardhi and Kol tribes in Madhya Pradesh.**

| S.N. | Tree Species Scientific Name, Author Name, (Family) | Local Name | Name of Tribe associated with tree species and (Locality) of tribe | Uses associated with tree species in specific tribal locality |
|---|---|---|---|---|
| 1. | *Caryota urens* Linn., (Family Areaceae) | Sulphi | *Gond Tribe* (Bori - Pipariya , Hoshangabad ) | Fruit extract is orally consumed 3-5 ml. for a period of 2-3 days in cure of Headache & Body pain. |
| 2. | *Pongammia pinnata* (Linn.) Pierce (Family Fabaceae ) | Karanj | *i) Baiga Tribe* ( Baiga chak, Dadar Tola, -Dindori) *ii) Gond Tribe – (Pondpur, Jhariyabad Dindori)* | Fruit oil: extracted from fruit is used to cure Rheumatic pain and Arthiritis. Seed Paste : in cure of Skin diseases -Eczema . |
| 3. | *Terminalia bellirica* Roxb. ( Family Combretaceae) | Baheda | *i) Gond Tribe* ( Bordikala- Irchawar, Sehore) ii) Bhariya Tribe (Geldubba- Patalkot Valley, Chhindawara) | Seed extract : is orally administered 2-3ml for 2-3weeks to cure Diarrhoea. Fruit paste : is applied on Boils and Sores present on patients body & in cure of Measles. |
| 4. | *Terminalia arjuna* (Roxb. ) Wgt. Arn. ( Family Combretaceae) | Arjun | *Birhor Tribe* (Geldubba- Patalkot Valley, Chhindawara) | Bark Paste : is applied on broken bones in cure of fracture . |
| 5. | *Madhuca longifolia* Koen, ( Family Sapotaceae) | Mahua | Korku Tribe ( Juna Pani –Tirmani, Harda) | Flowers : are boiled and extracts is given empty stomach as tonic to cure Fever. |
| 6. | *Terminalia chebula* Retz. ( Family Combretaceae) | Harra | Bhilala Tribe Korkheda- Nasrullaganj, Sehore) | Fruit powder : is orally administerd with half cup of water twice a day in cure of Diabetes |
| 7. | *Ficus racemosa* Linn.( Family Moraceae) | Gular | Gond Tribe ( Kundam –Jabalpur) | Leaves extract : used in cure of Jaundice. |
| 8. | *Ficus bengalensis* Linn. ( Family Moraceae) | Bargad | *Gond Tribe* (Delwadi - Obedullaganj, Raisen ) | Aerial Roots : decoction prepared from aerial root is orally administered in cure Diabetes |
| 9. | *Shorea robusta* Gaertn. (Family Dipterocarpaceae) | Sal | *Baiga Tribe* ( Niwas – Mandla) | Seeds: are powdered is used to cure Diarrhoea |
| 10. | *Diospyros melaoxylon* Roxb. ( Family Combretaceae) | Tendu | Gond Tribe (Banjari Seoni ) & Obedullaganj Raisen | Seeds: are powdered is used to cure Dy sentery. |
| | | | *Korku Tribe* ( Devgaon- Rehti, Sehore) | Flowers : Paste is prepared and applied to cure Skin disease Itching & Scabies |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 11. | *Cassia fistula* Linn. ( Family Caesalpinaceae ) | Amaltas | *Birhor Tribe (Tamia , Chhindawara )* | Fruit pulp decoction : is used empty stomach as Abortifacient |
| | | | *Gond Tribe* (Delakhari, Tamia Chhindawara) | Root decoction is used to cure Jaundice |
| 12 | *Mangifera indica* Linn. (Family Anacardiaceae) | Aam | *Baiga Tribe* (Junapani-Amarkantak) | Seeds : are powdered in cure Diarrhoea and Dysentery |
| 13 | *Aegle marmelos* Corr. ( Family Rutaceae) | Bel | *Gond Tribe* (Dindori) | Leaf powder is used to cure Diabetes. |
| | | | *Kol Tribe* ( Govindgarh, Rewa) | Leaves: seven leaves *are* consumed empty stomach for seven days with equal number of leaves of Black pepper *(Piper nigrum)* for three weeks empty stomach which cures Tumor in any body part. |
| 14 | *Calotropis gigantea* ( L.) R. Br. (Family Asclepiadaceae) | Madar | *Baiga Tribe* ( Karanjia ,Chada Dindori | Bark Paste is applied on chest in cure of Bronchitis |
| 15 | *Bacopa monnieri* (Linn.) Penwell (Family Scrophulariaceae ) | Brahmi | *Gond Tribe* (Nagan Deori –Dhuma Seoni ) | Extracted seed oil is applied as antiseptic oil to check fungal growth on head and inhibits Hairfall and Baldness |
| 16 | *Lannea grandis* (Dennst.) Engl. (Family Anacardiaceae | Moyen | *Gond Tribe* (Nagan Deori –Seoni ) | Boiled leaves applied locally on swelling and areas of Body pain. |
| 17 | *Datura metel* Linn. ( Family Solanaceae | Sada dhatura | *Kol Tribe* Padariya ,Bicchiya (Rewa ) | Root extract is applied in cure of chest and Rheumatic pain. |
| 18. | *Stereospermum chelonoides* (Linn. f.) DC (Family Bignoniaceae) | Paddar | Baiga Tribe (Bicchia ,Mawai Mandla) | Stem and bark paste is used for cure of wound due to snake bite. |
| 19 | *Solanum torvumSwartz.* (Family Solonaceae) | Ringi | Korku Tribe (Birpur , Irchawar – Sehore ; Sohagpur - Hoshgangabad ) | Root powdered paste is prepared and applied for cure of Bone fracture. |
| 20 | *Buchnania lanzan* Spr. (Family Anacardiaceae) | Achar | Gond tribe (Kalaakahr –Bhowra Betul; Kesal , Hoshangabad ) | Stem bark is pounded and applied in inflammation as antidote of snake bite. |
| 21 | *Butea monosperma* ( Lam.) Tuab (Family Fabaceae) | Palas | Bhariya Tribe – Tamia Patalkot Valley, Chhindwara ) | Gum extracted from bark is applied on wound as antidote for snake bite. |
| 22 | *Celastrus paniculata* Willd (Family Celastraceae) | Malkangani | Pardhi tribe (Sohagagpur , Hoshangabad) | Extracted seed oil is gently massaged on body parts affected by paralysis |

locality. Hence, these information and knowledge prevalent among other communities and localities needs to be scientifically and systematically documented before they are lost on account of rapid change in tribal culture.

**Acknowledgement**

The author is thankful to Director, Tropical Forest Research Institute, Jabalpur for arranging funds for carrying out the present investigation. Thanks are due to Head, Biodiversity and Sustainable Management Division for providing necessary facilities for conducting studies. The author is also thankful to State Forest Department officials for granting facilities during the present investigation.

**References**

Anonymous. (2001). Census Report. Govt. of India, New Delhi.

Bhalla S., Patel J.R. and Bhalla, N.P. (1992). Ethno medicinal studies of genus *Indigiofera* from Bundelkhand region of M.P. *J. Econ. Tax. Bot. Addl.Series* (10): 221-332.

Buch M.N. (1991). The forest types and forest Dwellers. In *The Forest of Madhya Pradesh*. Publisher Madhya Pradesh Madhyam, Bhopal.

Chopra R.N., Chopara S.L. and Chopra I.C. (1965). *Glossary of Indian Medicinal Plants.* CSIR, New Delhi.

Chopra R.N., Chopra I.C., Handa K.L. and Kapur L.D. (1982). *Indigenous Drugs of India.* Second edition (Reprinted) Academic Publishers, New Delhi.

FSI. (2003). Status Report of Forests in India, State forest Report MOEF, FSI, Dehra Dun

Jain A.K. (1988). Tribal's Clans in Central India and their role in conservation. *Env. Conserve*. (1): 368-369.

Jain S.K. (1963). Observation on Ethno botany of tribal's of M.P. *Vanyajat*i 11(4): 177-187.

Jain S.K. (1975). Ethno botany of Central India Tribals**.** *J. Indian. Bot. Soc***.** Abstract**.** 1 (6)**:** 63.

Jain S.K. (1981)**.** *Glimpse of Indian Ethno botany*, Oxford and I.B.H Pub.**,** New Delhi**.**

Jain S.K. (1991). *Dictionary of Indian Folk Medicines and Ethno botany*. Deep Publications, New Delhi.

Jain S.P. (1996). Ethno- Medico –Botany cal survey of Chaibasa Singbhum district, Bihar *J. Econ .Tax. Bot. Addl. Series*: 12: 403-407.

Jain S. K. and Tarafdar C. R. (1963). Studies in Indian Ethno botany: Native plant remedies for snake bites among Adivasis of Central India. *Med. J.* Vol. 57: 307-309.

Kapur S. K. (1990). Review on Ethno-medico plants for skin affilications. *Indian Drugs* 28 (5): 210-223.

Maheshwari J. K. (1984). Ethno botanical survey of Mandla district of M.P. *In Proc. 2nd Annual Workshop on MAB Project. Dept. of Environment & Forest and Wild life*. New Delhi : 60-63.

Maheshwari J. K. and Dwivedi R.P. (1988). *Ethno medicinal plants of Bhariya Tribes of Patalkot valley, Chhindwara District, M.P*. Medical plants including microbes fungi Pub. Today and Tomorrow Printers and Publishers, New Delhi –5: 139 – 155pp.

Maheshwari J.K. (1989). Case study of three primitive tribes of M.P. (Abujhmarias, Baigas, and Bharias) of Central India. In *Methods and Approaches in Central India. Society of Ethan botanists*, Lucknow. 187-188 pp.

Maheshwari, J.K. (1996.) Ethno botanical documentation of primitive tribes of Madhya Pradesh. *J. Eco.Taxon.Bot. Additional series*. 12: 206-213 pp.

Nadkarni A.K. (1982). *Indian Materia Medica* Popular Prakashan Bombay Vol. I and II (reprinted).

Oomachan M. and Srivastava J.L. (1996). *Flora of Jabalpur*, Scientific Publisher, Jodhpur.

Pandey R.K., Bajpai A. K. and Bhattacharya P. (1991). Some unique folk medicines of Baiga tribes of Mandla district M.P. *J. of Tropical Forestry*, 7 (1): 203-204.

Pandey D.N. (1998). Ethno-forestry: Local knowledge for sustainable forestry and livelihood security. *Himanshu Publication*, New Delhi.

Pandey P. K. (2005). Ecological assessment of vegetation studies in JFM adopted villages in Satpura plateau M.P. *Indian Forestor*, 131 (1): 97-114.

Ram Prasad, Pandey R.K and Bhattacharya P. (1990). Socio – Economic and Ethno-media–botanical studies of Patalkot region. A case study of Bhariya Tribes. In Proc. *National Seminar on Medicinal & Aromatic plants. SFRI*, Jabalpur, 46 – 59 pp.

Rai B.K., Ayachi S. S. and Rai. A. (1996). A note on Ethno-medicines from Central India. *J. Econ. Taxon. Bot. Additional Series* 12*: 186 – 191.*

Rai Rajiv, Nath V. and Shukla P.K. (2002). Ethno-medicinal studies on Bhariya Tribes in Satpura plateau of Madhya Pradesh. *Agriculturist* 13 (1 & 2): 109-114.

Rai Rajiv, Nath V. and Shukla P.K. (2003). Ethnobiologicl studies on Bhariya tribes of Madhya Pradesh, *J. of Tropical Forestry 13* (1):150-160.

Rai Rajiv and Nath V. (2004). Ethno botanical studies in Patalkot Valley in

Chhindawara district of Madhya Pradesh. *Journal of Tropical Forestry*, SFRI, Jabalpur**. 20 (2)**: 38-50.

Rai Rajiv, Nath V. and Shukla P.K. (2004). Characteristics and Ethno botanical studies on Primitive tribes of Madhya Pradesh. In Govils (edited) *Ethno- medicine and Pharmacognosy*, *"Recent progress in Medicinal Plants*" 'Publisher: Researcho Book Centre, New Delhi, 8(37): 543– 552

Rai, Rajiv and Nath V. (2005a). Some lesser known oral herbal contraceptives in folk claim in Bastar region of Chhattisgarh. *Journal of Natural Remedies*, 5 (2): 153-159

Rai, Rajiv and Nath V. (2005b). Use of Medicinal Plants by traditional herbal healers in Central India. *Indian Forester*. 13 (3): 463-468.

Rai, Rajiv and Nath V. (2005 c). "Medicinal and Aromatic plant product – Oil used in ethno-medicine by Gond tribe in Central India". *In Proc Nat. Sem. on Medicinal and Aromatic Plants*, IGKVV Raipur 26-27 Feb. 2005, 204 pp.

Rai, Rajiv and Nath V. (2006). Use of indigenous herbal medicinal plants by Gond traditional healers in cure of skin diseases in Bastar region of Chhattisgarh. In P .C. Trivedi (edited) *Medicinal Plants and Traditional Knowledge*, Publisher: I.K. International Pub. House, New Delhi. 229-235 pp.

Rai Rajiv (2006). Traditional Uses of Genus Curcuma in Folk Medicines prevalent in Central India. *Indian J. Trop. Biodiv*. 14 (2): 153-159.

Rai Rajiv. (2007). Studies on Indigenous herbal Remedies in cure of Fever by tribals of Madhya Pradesh .In Neeru Singh (edited) *Tribal Health*, Publisher Regional Medical research Centre for Tribals, 177-182 pp.

Satpathy K. B. and Panda P.C. (1992). Medicinal use of some plants among tribals of Sundergarh district, Orissa. *J. Econ. Tax. Bot. Addl. Series,* 10: 241-249.

Saxena H.O and Shukla C.S. (1971). Medicinal Plants of Patalkot, Chhindwara. Tech. Bull No 13, *Pub. SFRI, Jabalpur*.

Saxena H.O. (1988). Observation on ethno botany of Madhya Pradesh. *Bull. Bot. Survey of India*. 28: 149 - 156.

Shukla P K. (2004). Role of Research in sustainable and profitable management of NWFP. *Vaniki Sandesh.* 28: (2-3), 1-4.

Tewari D.N. (1984). Primitive Tribes of Madhya Pradesh. *Strategy for Development*, GoI, New Delhi.

.

# Know Your Biodiversity

**Swaran Lata and P.B. Meshram**
Tropical Forest Research Institute, Jabalpur

***Alcedo atthis***

*Alcedo atthis* is a small, shy bird commonly known as common Kingfisher, Eurasian Kingfisher and River Kingfisher. Generic name is derived from Latin word '*Alcedo*' means 'Kingfisher'. *Alcedo atthis* was first described by Carl Linnaeus in 1758 and named as *Gracula atthis*. It belongs to order Coraciiform and family Alcedinidae. It is found throughout Europe, Africa and Asia. It is resident bird species found throughout India but northern populations of *Alcedo atthis* migrates regularly to southern areas in winter. They migrate in flocks during night. It is generally found near the ponds, pools, lakes and streams.

It is beautiful bird with iridescent plumage which makes it the one of the most colourful bird. Wings, back and head are completely blue. Underbelly is reddish brown. Throat and small part of neck is bright white. Beaks are long and sharp. Male and female are very similar except for their beaks. Feets are reddish in color. Male's beak is dark black while lower half of female is reddish brown. Young ones are greenish or duller than adults.

Breeding season of *Alcedo atthis* is April to October. Generally females lay glossy white eggs, 6-7 in number and incubation period is 20 days. They build nest in clay, rocky and sandy ground near water sources sometimes occasionally seen in hole in wall, rotten tree stump. They generally make tunnels of 50-100 cm long. It is carnivores and small fishes, tadpoles, beetles, crabs and aquatic insects are the food of common kingfisher. *Alcedo atthis* maintains their own territory if another kingfisher enters its territory, both birds display fights.

*Alcedo atthis* is lest concern in IUCN Red List of threatened species because of its large range. The Kingfisher is fully protected under Schedule 1 of the Wildlife and Countryside Act, 1981 (3). These are important members of ecosystems and good indicators of freshwater community health. In India population of *Alcedo atthis* is not quantified yet. Although the population of *Alcedo atthis* seems to be stable at this time but changing habitat quality of wetlands by water pollution and the degradation of the fluvial habitat may affect their population in near future.

***Thalictrum foliolosum***

*Thalictrum foliolosum* is a medicinal plant which belongs to family Ranunculaceae. It is commonly known as Meadow rue, Leafy Meadow rue, Mamira, Chireta, Dampate and Gurbianai. Genera *Thalictrum* means "to flourish". In ancient time the newborn infants were placed on a pillow filled with Meadow rue to ensure a prosperous life. It is found throughout the Himalaya, Khasi hills, Punjab, Uttar Pradesh, Madhya Pradesh, Himachal Pradesh, West Bengal, Sikkim, Nagaland, Manipur, Meghalaya, Bihar and Orissa.

It is a robust, bushy, glabrous, perennial herb. Rootstock fibrous, yellowish-brown. Stems branched, often presenting a rambling habit. Leaves pinnately decompounds; petioles 2-6 cm long, sheathing and auricled at base, stipules present; leaflets broadly ovate, lobes orbicular, glaucous beneath, almost sharply toothed. Flowers pale green, white, and polygamous in large panicles. Tepals obovate, greenish or purplish inside. Stamens many, much longer than tepals. Filaments filiform; anthers acute. Carpels 2-3 mm long, style deciduous; ovary sessile, ovule one. Fruits (Achenes) few, usually 2-5, sessile, oblong, ellipsoid, and acute at both ends. Flowering and Fruiting season is June-October.

Meadow rue is found under tree shades and shady damp locations of forest. It is found in different part of Madhya Pradesh including Amarkantak. Roots

are high demand in market because of medicinal properties. Tribal people of Madhya Pradesh collect 'Mamira' from forest and sold in local markets. Due to overexploitation its status is vulnerable in Madhya Pradesh. It is rare in forest of north costal Andhra Pradesh.

The rootstocks and roots contain barbering, thalictrin, palmitine and are antiperiodic, diuretic, aperient, febrifuge bitter tonic, and purgative. The paste of the plant or of roots and rootstocks is locally used in treatment of eye diseases and jaundice, and in skin diseases and to suppress boils. It also clears the brain and is used as a collyrium (anjan) in opthalmia, improves eye-sight; good in toothache, in acute diarrhea; a good application in piles, nail troubles, and discolouration of the skin (Yunani). The root has been found useful in convalescence after acute diseases, in mild forms of intermittent fevers and in atonic dyspepsia.

# Tropical Forest Research Institute

**Published by:**

**Tropical Forest Research Institute**
**P.O. RFRC, Mandla Road**
**Jabalpur – 482021 M.P. India**
**Phone: 91-761-2840484**
**Fax: 91-761-2840484**
**E-mail: vansangyan_tfri@icfre.org**
**Visit us at: http://tfri.icfre.org or http://tfri.icfre.gov.in**